अष्टाचार्य एक झलक

लेखक—

श्री ज्ञान मुनि, जैनसिद्धान्तरत्नाकर

❀

प्रकाशक :

श्री जैन जवाहर मित्रमण्डल, ब्यावर

अध्यात्म-साधना

के

सुधा-सिन्धु

आचार्य श्री नानेश

के

कृपा - निष्यंद से

आप्लावित होकर

यह लघीयसी

कृति

उन्हीं के श्रीचरणों

में

समर्पित

— ज्ञान मुनि

राणावास

दिनांक ९-९-१९७८

मंगलाचरण

❀

देव-गुरु-धर्म-आगम

अस्माकं त्रिदशोऽ-रिहन्सुविरतो रागेण द्वेषेण च,
अस्माकं क्षितिमण्डले मुनिजनाः स्वाचारयुक्ता सदा।
अस्माकं शुचियुक्तशास्त्रमहिमा दीप्तो धराप्रान्तरे,
अस्माकं सुदयाऽपरिग्रहयुतो धर्मोपदेशो मुदा ॥

—(ज्ञान मुनि)

राग द्वेष से रहित ही हमारे देव है। महीमण्डल मे विचरण करने वाले आगमप्रणीत आचार से युक्त ही हमारे गुरु है। हमारे आगम यथार्थवाद गुण युक्त और पृथ्वी तल पर दीप्त है। अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह युक्त ही हमारा धर्म है।

❀

अष्टाचार्य - गुण - सौरभ

卐

अहो रूपं अहो ज्ञानं, अहो ध्यानं अहो गुणाः ।
अहो भक्ति. अहो शक्तिः सर्वं सर्वं अहो अहो ॥

— ज्ञान मुनि

भावार्थ—

अहो ! आपका सौम्य रूप धन्य है !
अहो ! आपकी ज्ञानराशि धन्य है !
अहो ! आपकी प्रशस्त ध्यानसाधना धन्य है !
अहो ! आपका गुणसमूह धन्य धन्य है !
अहो ! आपकी प्रभुभक्ति धन्य है !
अहो ! आपका संयम - पराक्रम धन्य है !
अहो ! आपका सम्पूर्ण जीवन ही कैसा है !
यह सब वर्णनातीत अद्भुत है ।

※ संकल्प ※

वाणी में मधुरता, ब्रह्मचर्य में तेजस्विता, विचारों में प्रखरता, जीवन में ओजस्विता, ज्ञान में विशालता, अनुशासन में कठोरता, मन मेंस्वच्छता, काया में पवित्रता, संयम में सरसता किसको नही आकर्षित करती ? ऐसे व्यक्तित्व से जनता का मानस स्वतः ही प्रभावित हो जाता है। ऐसे हैं प्रतिभाशाली नर-रत्न—आचार्य श्री ननेश ।

पुष्प की सुगंध षट्पद को बतलाने की आवश्यकता नही होती। वह तो स्वयमेव उस गंध से आकर्षित होकर मकरन्द-पान करनेपहुंच जाता है।

इसी प्रकार जब ऐसे महापुरुष का मुखरूपी निर्झर ब्यावर की जनता पर सद्धर्मरूपी सुधा का वर्षण करने लगा तब जनता का कर्म-मल इससे आप्लावित होकर प्रक्षालित होने लगा। इस विशाल जनसमूह में से एक अल्पज्ञ बालक मैं भी था ।

जब उन सुधा-बिन्दुओं ने मेरे ज्ञान रूप नेत्रों में अंजन का काम कर यथार्थ चिन्तन करने के लिये अपूर्व दिशा-निर्देश दिया, तब मानस-क्षेत्र में विरक्ति का बीज परिस्फुटित हुआ। जिसका अनरत सिंचन, विरक्तों की धाय माता, कर्मठ सेवाभावी (श्री इन्द्रचन्दजी म.) ने किया। उनके सान्निध्य में आचार्य भग वान की परम कृपा से ज्ञान का अभिनव आलोक प्राप्त हुआ। अ

अन्य विद्वानों के अतिरिक्त विद्वद्रत्न आचार्य चन्द्रमौलि (काशीनाथजी) का भी मुझे पर्याप्त सहयोग प्राप्त हुवा ।

इसी अध्ययनकाल में जब मेरी रुचि संस्कृत में श्लोकरचना करने की बनी, तब एक विचार स्फुरित हुआ-किस विषय की श्लोकरचना की जाय ?

हृदय के अन्तस्तल ने मष्तिष्क को झंकृत किया । बिच ों की स्फुरणा हुई, जिन्होंने जग के अज्ञान-तिमिर का विनिवार करने के लिये ज्ञान की ज्योति को प्रदीप्त किया था, ऐसे आसन्न ारी 'अष्टाचार्य' हैः—

१ सयम की देदीप्यमान मशाल, महान् क्रियोद्धारक, दीर्घ स्वी आचार्य **श्री हुक्मीचन्दजी म० सा०**

२ शिवपथानुयायी, प्रकांड विद्वान् आचार्य
श्री शिवलालजी म० सा०

३ विरक्तों के आदर्श आचार्य
श्री उदयसागरजी म० सा०

४ महान् क्रियावान्, संयम के सशक्त पालक आचार्य
श्री चौथमलजी म० सा०

५ सुरासुरेन्द्रदुर्जय कामविजेता आचार्य
श्री श्रीलालजी म० सा०

६ महान् क्रान्तिकारी, वादिमानमर्दक, ज्योतिर्धर
आचार्य श्री जवाहरलालजी म० सा०

७ शांत क्रान्ति के जन्मदाता, सुललित भाषा प्रयोक्ता, श्रमण संघ के उपाचार्य-

आचार्य श्री गणेशीलालजी म० सा०

८ समताविभूति, जिनशासन प्रद्योतक, धर्मपाल-प्रतिबोधक, विद्वद् शिरोमणि वर्तमान आचार्य गुरुदेव

श्री नानालालजी म० सा०

उपर्युक्त नरपुंगवों के जीवन-बिन्दुओं पर यथाशक्य प्रकाश डाला जाय, इसी भावना से संप्रेरित होकर मैंने श्लोक-रचना का अभ्यास प्रारम्भ कर दिया।

महापुरुषों का जीवन अनन्त गुणों का आगार होता है। उनका प्रत्येक कार्य एक विलक्षण महत्व को लिये हुए होता है। उन अपरिमेय गुणों पर प्रकाश डालना मेरे अल्प सत्व से बाहर है। उनके जीवन-बिन्दुओं पर लेखनी चलाना अपनी अज्ञता को प्रकट करना है।

जिस प्रकार सहस्रों कोश गति करने पर भी समुद्र का किनारा छोर प्राप्त नहीं किया जा सकता, नभः स्थल में अनवरत उड़ाने भरने पर भी आकाश का अंत प्राप्त नहीं किया जा सकता, भूलोक के अन्तर्गर्भ में भी मानव कितना ही पैठता चला जाय, फिर भी उसकी सीमा को प्राप्त नहीं कर सकता।

ठीक इसी प्रकार महान् आत्माओं के अपरिमेय गुणों का यथावत् वर्णन करना दुःसाध्य ही नहीं असंभव भी है। उन गुणों के महत्व को यथावत् व्याख्यापित करने की शक्ति न वाणी में है और न लेखनी में ही।

तथापि अन्तस्तोष के लिये यह प्रयास किया गया है और फिर बाल्यकाल का बचपन तो निराला ही होता है। वह दु:साध्य कार्य को करने के लिए भी मचल उठता है।

अत: अपने अल्प सत्त्व से ही पुरुषार्थ में तत्पर होकर प्रत्येक आचार्य के मुख्य गुणो को अष्ट श्लोक में आबद्ध किया है। साथ ही संक्षिप्त जीवन-परिचय भी दिया गया है। इसी प्रकार उनका गुण कीर्तन करने के लिये 'अष्टाचार्य गुणाष्टकम्' 'आचार्य हुक्म्यष्टकम्' आचार्य नानेशाष्टकम् आदि की भी रचना की गई है। प्रथम प्रयास होने से भाषा मे सौष्ठव की कमी सहज स्वाभाविक है।

यह अष्टाचार्य का जीवन नही अपितु जीवन की आंशिक 'झलक' है। आदि के चार आचार्यो का जीवनवृत्त प्राय: समुपलब्ध नही है। फिर भी अनुसंधान के साथ सभी आचार्यो के यथासभव उपलब्ध जीवनवृत्त का आलेखन किया जा रहा है। जिनका पठन करके हम उन महापुरुषों के आदर्श जीवन का परिज्ञान कर स्वयं की आत्मा को भी सत् पुरुषार्थ की ओर प्रगतिशील कर सके।

इसी भावना के साथ........ ....

—'ज्ञान मुनि'

समाज का महान अहोभाग्य है कि इस बदलती दशा में भी प्रभु महावीर के सिद्धान्तों को यथावत् स्थायी रखने वाले आचार्य विद्यमान है जिनके कुशल नेतृत्व को पाकर समाज मे अनेकानेक साधु-साध्वी अपनी प्रतिभा का विकास कर रहे है। सस्कृत, प्राकृत, न्याय दर्शन, आगम आदि अनेक विषयों पर अधिकार रखने वाले अनेक विद्वान् समाज में उदित हुए है।

विद्वद्वर्य श्री ज्ञानमुनिजी म० ने अल्प वय में अर्थात् लगभग १३ वर्ष की अवस्था में आचार्य प्रवर के सान्निध्य में भागवती दीक्षा अंगीकार की। इतनी अल्पायु में आचार्य श्री के सान्निध्य मे अन्य किसी पुरुष ने दीक्षा अंगीकार नही की। आचार्य प्रवर की दूरदर्शिता के फलस्वरूप विद्वद्वर्य श्री ज्ञानमुनिजी ने सयम साधना के साथ ही ज्ञानार्जन की दिशा में अच्छी उन्नति की। लगभग १८ वर्ष की अवस्था में श्री साधुमार्गी जैन धार्मिक परीक्षा बोर्ड बीकानेर की सर्वोच्च रत्नाकर परीक्षा उत्तम अंको में उत्तीर्ण की। आपकी गृहस्था-वस्था की बहिन विदुषी महासती श्री ललिताप्रभाजी भी आचार्य भगवान् की नेश्राय में आपके साथ ही दीक्षिता हुई। उन्होंने भी रत्नाकर परीक्षा अच्छे अंकों से उत्तीर्ण की और अब वह शासन सेवा मे रत है।

विद्वद्वर्य श्री ज्ञानमुनिजी ने शैशवावस्था में ही अष्टाचार्य जीवन झलक का आलेखन प्रारंभ कर दिया था जिसे पूर्ण करके आचार्य प्रवर के चरणों में समर्पित कर दिया।

सत जीवन मे जो वस्तु उठा सकने की स्थिति में न हो या पास रखने की आवश्यकता न हो, उस पर से अपनी नेश्राय छोड़ दी जाती है अर्थात् किसी श्रावक को परठ दी जाती है। तदनुसार

जिसके पास परठी गई उसने उसकी सुरक्षा हेतु श्री गणेश जैन ज्ञान भंडार रतलाम में रख दी।

यह कृति साहित्य समिति के सदस्यों ने अवलोकन की। साथ ही उस पर विद्वद्वर्य श्री प्रेममुनिजी म० के हृदयोद्‌गार भी देखे तो यह सारा विषय साहित्य समिति के सदस्यों ने पाठकों के लिये उपयोगी समझा और श्री गणेश जैन ज्ञान भंडार रतलाम से उसकी प्रतिलिपि प्राप्त कर विद्वद्वर्य श्री ज्ञानमुनिजी की सांसारिक माता श्रीमती सौरभबाई की ओर से प्रकाशित किया जा रहा है।

आशा है पाठकगण 'अष्टाचार्य एक झलक' से पूरा लाभ उठाएंगे। साथ ही उसमें कोई त्रुटि दृष्टिगत हो तो सूचित करने की कृपा करेंगे ताकि आगामी संस्करण में संशोधन किया जा सके।

लालचन्द मुणोत

न्याय-व्याकरणतीर्थ, ब्यावर

हार्दिक उद्गार

❀

संयोग, सृजन का प्रतीक है । वियोग विनाश-विध्वंस का प्रतीक है । अब तक जो भी पढ़ा-लिखा, सुना या सुनाया गया वह संयोग की ही सर्जना है, अन्यथा कुछ भी नही । वर्षा ऋतु मे उमड़ते-घुमड़ते घटाटोप बादलो की गड़गड़ाहट एव सघर्षजन्य मेघों की टकराहट से प्रस्फुटित होने वाली प्रकाश किरणे भी सयोग एवं सर्जना की प्रतीक है । किन्तु वे प्रकाश किरणें क्षण भगुर प्रकाश-प्रदायिनी से अधिक कुछ नही । अतः संयोग से सघर्ष का जन्म होना या जुड़ना क्षणभंगुर प्रकाश तुल्य ही सिद्ध होगा ।

प्रस्तुत "अष्टाचार्य एक झलक" के आद्य प्रतिनिधि स्व० पूज्य श्री हुक्मीचन्दजी म० सा० को स्व० पूज्य श्री लालचन्दजी म० सा० का सयोग मिला । जिसमे संघर्ष नही अपितु उत्कर्ष की उच्च भावनाएँ आन्दोलित हो उभरने को उत्सुक थी, गुरुदेव की गरिमा-महिमा के प्रति अत्यन्त विनम्र भाव थे । विनय-विवेक-समन्वित भावनाओं के वेग मे प्रस्फुटता थी, विध्वंस को अवकाश ही कहाँ था ? शिष्य पहुंचा गुरु चरणो में ! विनम्र निवेदना के स्वर अन्तर संवेदना से प्रस्फुटित हो उठे । कुछ क्षण अवाक स्तब्धता में बीते । गुरुदेव ने सहज आत्मीय दृष्टि से एक क्षण शिष्य की ओर निहारा और बोले-वत्स ! निर्बलता मे निर्भयता का स्वर मुखर नही हो सकता । अतः मानसिक निर्बलता हटा-कर निर्भय सतेज मार्ग का अवलम्बन कर, 'तिन्नाण तारयाण' के पावन पथ को प्रशस्त करो । यह थी उत्कर्ष-समुत्कर्ष की समुन्नत भावनाएँ, जिन्होने निर्भयता का पावन पथ प्रशस्त किया ।

इसी पावन पथ के पथिक ने अध्यात्म जगत् के क्षितिज पर जीवन निर्माण की नूतन चेतना का सूत्रपात किया जिसे आप-हम क्रान्ति' शब्द से जानते-पहचानते है । किन्तु 'क्रान्ति' शब्द में भी वह सब नही है जिसे कुछ श्लोको द्वारा उद्‌घाटित करने का सफल सत् प्रयास किया गया है।

क्रान्ति जब सघर्ष से जुड़ती है तो वह विकराल राक्षसी रूप धारण कर विप्लवकारी भावनाओं को उभार कर मानव-समुदाय को विनाश के गर्त मे गिरा देती है । ऐसी क्रान्ति क्षणभंगुर प्रकाश प्रवाही होती है । उसमे स्थायी प्रकाश-प्रवाह कहाँ और कैसे ? अर्थात् असंभव ही है।

प्रस्तुत परम्परा के आद्य सवाहक स्व० क्रियोद्धारक आचार्य-प्रवर श्री हुक्मीचन्दजी म० सा० ने कभी यह कल्पना भी न की थी, कि वे किसी गच्छ विशेप की स्थापना के उद्देश्य से किसी प्रवृत्ति विशेष को अपनी उच्चता का माप दण्ड बनाकर अपना रहे है अथवा किसी वर्ग विशेप को अपने से निम्न स्तरीय सिद्ध करने का प्रयास कर रहे है। उनके जीवन की आत्मलक्षी सहज प्रक्रिया के रूप में विशुद्ध निर्ग्रन्थ परम्परा का पवित्र प्रवाह प्रवहमान हो उठा। वस्तुन: इस परम्परा का उद्‌भव 'घुणाक्षर न्याय' के अनुसार सहज एव सात्त्विक ढग से हुआ । जिसमें कृत्रिमता एव क्लिष्टता को कतई अवकाश नही था । कल्पनातीत ढग से जन्मी हुई इन विशुद्ध निर्ग्रन्थ परम्परा का अजस्र प्रवाह आज भी प्रवहमान है जिसकी नस-नस मे सतेज उष्मा संचरित है, जो साधना-पथ पर पिछड़े जर्जरित कुंठित हतोत्साहित मानव समुदाय में नूतन स्फूरणा का संचार कर अन्तर जागृति का प्रेरक पसग उपस्थित कर रही है।

प्रस्तुत परम्परा की शृंखलाबद्ध पर्याय में आबद्ध हो एक के बाद एक आचार्यों का अनवरत अवतरण होता रहा है। सभी आचार्य अपने युग के महान् तपोधनी, यशस्वी, बर्चस्वी, ओजस्वी एवं तेजस्वी सिद्ध हुए। प्रत्येक आचार्य ने तात्कालिन समस्याग्रस्त भटकते हुए मानव समुदाय को कर्त्तव्यनिष्ठा की नई नूतन दिशाओं का अवबोध कराकर साधना के पथ को प्रशस्त किया।

उक्त आचार्यों की पुनीत शृंखला में युगप्रधान श्रीमद् जवाहराचार्य का नाम विशेष रूप से उभरकर जन-मानस के सामने आया, जिन्होंने सामयिक राष्ट्रीय परिस्थितियों से जकड़े हुए किं-कर्त्तव्यविमूढ भक्त समुदाय को आगम-सम्मत दृष्टिकोणों से प्रभावित कर राष्ट्रीय कर्त्तव्यों के साथ जोड़ने का अभूतपूर्व साधु-योग्य कर्त्तव्य का निर्वाह किया।

आपके उत्तराधिकारी के रूप में श्रीमद् गणेशाचार्य का अवतरण भी एक आलौकिक उपलब्धि सिद्ध हुई। श्रीमद् गणेशाचार्य के जीवन का कण कण श्रीमद् जवाहराचार्य के उपदेशों से अनुरजित था। वे उन उपदेशों की क्रियान्विति के कट्टर पक्षधर थे। वे चाहते थे कि समाज द्वारा संकलित गुरुवर्य श्रीमद् जवाहराचार्य के उपदेश पुस्तकीय या वाचिक-वैचारिक सीमा में ही आबद्ध न हों, केवल साहित्यिक सम्पत्ति बनकर ही न रहें, बल्कि उनका उपयोग नैतिक धरातल पर राष्ट्रीय सामाजिक मानवीय संस्कृति के समुत्थान हेतु क्रियान्विति के रूप में हो। इसी दृष्टिकोण को सन्मुख रखकर आपने संगठित समाज रचना की दिशा में सराहनीय प्रयत्न किये, जिसके फलस्वरुप अखिल भारतीय स्तर पर स्थानकवासी जैन समाज एवं उसके साधु-साध्वी वर्ग का एक सगठन बना, जिसे आमतौर पर 'श्रमणसंघ' के नाम से जाना

पहचाना जाता है । स्व० श्रीमद् गणेशाचार्य इस संगठित समाज को आगमसापेक्ष विशुद्ध निर्ग्रन्थ परम्परा के आदर्शो मे ढालने के पक्षधर रहे । उन्होने संगठन को स्थायित्व देने की दृष्टि से एक आचार्य की निश्राय में शिक्षा-दीक्षा चातुर्मास-विहार-प्रायश्चित्त की बात अनेको बार प्रस्तावित की, किन्तु उसे सिद्धान्ततः उपादेय मानकर भी आचरण की दिशा मे आगे न बढ़ाया जा सका ।

गुरु-शिष्य के संकीर्ण विचारो ने एक गम्भीर व्यामोह पैदा किया । एक दूसरे के अपराधों को दबाने और छिपाने की मनोवृत्तियो का उद्भव हुआ, और सगठन दुराव-छिपाव की सकीर्ण वीथिका मे भटकते हुए बिखराव के कगार पर जा पहुँचा । इस प्रक्रिया से स्व० श्रीमद् गणेशाचार्य के सहृदयी सरल समर्पित व्यक्तित्व पर गभीर वज्रपात हुआ । विवश हो पदलिप्सा-विरक्त मानस ने अनुशासनहीन स्थिति से छुटकारा पाया और अपने संकल्पों के अनुरूप संगठित समाजरचना के सूत्र प्रदान किये । उस शान्त क्रान्ति के रूप की क्रियाविति के साकार दर्शन उन्ही के योग्य उत्तराधिकारी वर्तमान गणाधीश परम श्रद्धेय आचार्य प्रवर पूज्य श्री १००८ श्री नानालालजी म० सा के व्यक्तित्व और कृतित्व मे होते है । आपका व्यक्तित्व स्वर्गीय आचार्य प्रवर-त्रय के आदर्शों के समन्वय का प्रतीक है ।

"अष्टाचार्य: एक झलक" के रचयिता युवा मुनिवर्य ने प्रस्तुत कृति को विद्यार्थी अवस्था-शैशवकाल मे ही लिखा है । इस कृति द्वारा आपने अपनी गभीर अध्ययनशीलता का अनूठा परिचय दिया है । इसके साथ ही अध्ययन क्रम मे आगे बढते हुए अब आपने "जैनसिद्धान्तरत्नाकर" की परीक्षा मे विशेष योग्यता

के साथ सफलता प्राप्त की है । इस समय आपका ज्ञान विशद एव गभीर चिन्तन की ओर गतिशील है ।

आशा है, आप अपनी गभीर वक्तृत्वशैली से उत्तरोत्तर निर्ग्रन्थ श्रमण संस्कृति की सुरक्षा मे अपनी प्रतिभा का अनुपम कीर्तिमान स्थापित करेगे ।

यथानाम तथा गुण सपन्न मुनि "ज्ञान" के इस शुभ प्रयत्न के लिए साधुवाद समर्पित करता हुआ, प्रस्तुत परम्परा के शोध-पूर्ण विशद विवेचनात्मक लेखन की प्रतीक्षा के साथ विराम ! विश्राम ! इति शुभम् !

—प्रेम मुनि

सरल स्वभावी दानवीर सेठ

स्वर्गीय श्री मांगीलालजी मेहता. ब्यावर
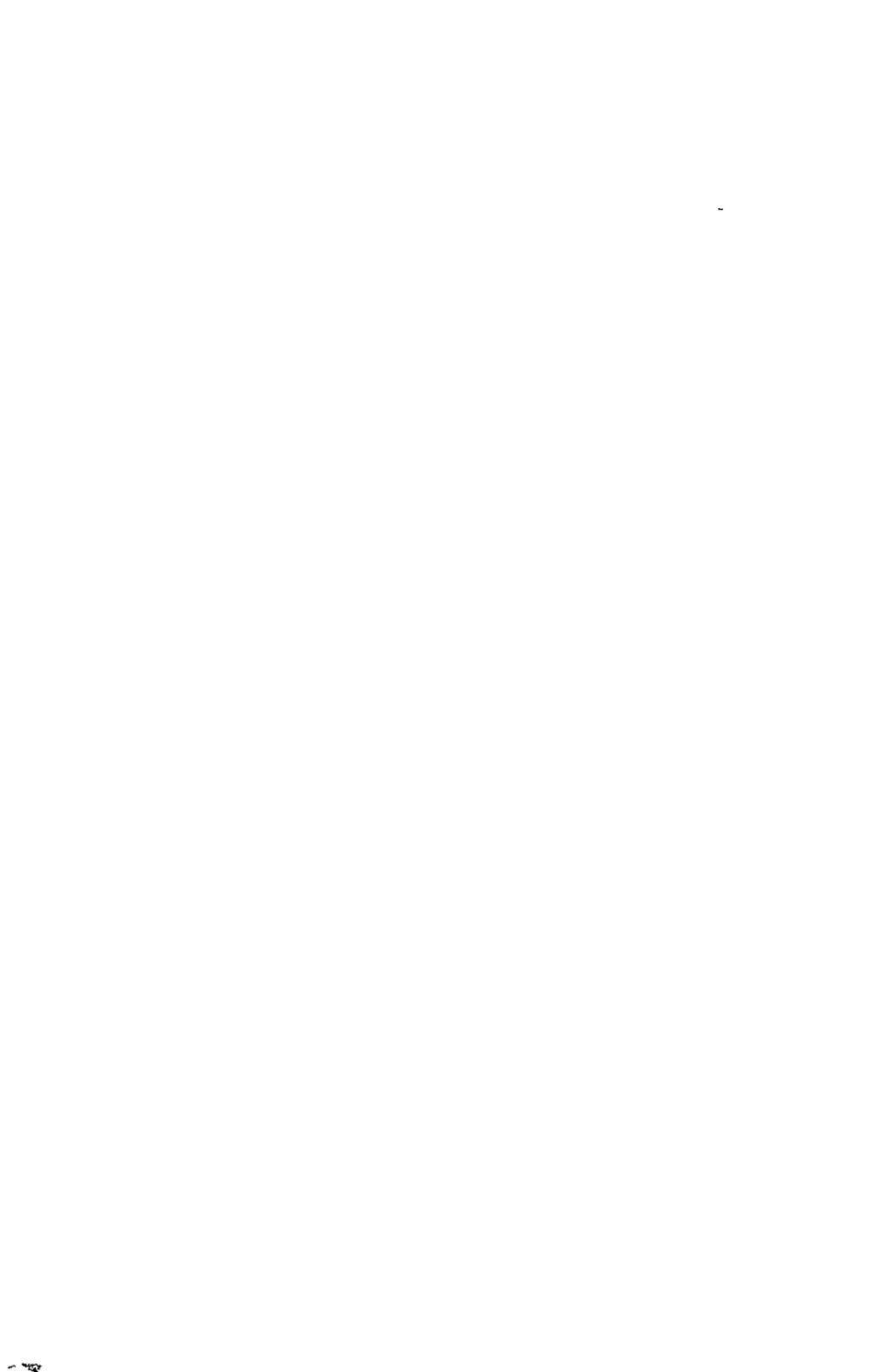
प्रकाशकीय

श्रद्धाशील धर्मप्रेमी पाठकों के कर-कमलों में 'अष्टाचार्य: एक झलक' पुस्तक अर्पित करते हुए परम प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है। प्रस्तुत पुस्तक मूल रूप में संस्कृत पद्यों मे रची गई है तथापि सर्व साधारण के लाभ की दृष्टि से हिन्दी मे अनुवाद भी दे दिया गया है। इसमे आचार्यवर्य पूज्य श्री हुकमीचन्द्रजी म० सा० से लेकर वर्त्तमान आचार्य पूज्य श्री नानालालजी म० सा० तक के आठ पट्टाधीश आचार्यों की भक्तिसिक्त स्तुतियां है। स्तुति से पूर्व सभी की जीवन रेखा तथा संक्षिप्त परिचय भी दिया गया है।

पुस्तक के लेखक 'यथानाम तथागुण' कहावत चरितार्थ करने वाले विद्वान् मुनि श्री ज्ञान मुनि है। अल्पकालिक दीक्षा पर्याय होने पर भी आपने ज्ञान और संयम के क्षेत्र में सराहनीय विकास किया है। यह हमारे लिए अतीव प्रमोद का विषय है।

यह भी हर्ष का विषय है कि श्री ज्ञान मुनिजी म० की संसारावस्था की पुण्यशालिनी माता श्रीमती मोरभबाई ने इसे प्रकाशित करने के लिए ७०१) रु० अपने पतिदेव स्व० मागीलालजी सा० महता की पुण्यस्मृति मे प्रदान किए है। श्री अमोलकचन्दजी, नेमिचन्दजी, तिलोकचन्दजी तथा ज्ञानचन्दजी की तथा श्री ललिताबाईजी की माता होने का आपको सौभाग्य प्राप्त है। इनमे से श्री ज्ञानचन्दजी (श्री ज्ञान मुनि) तथा महासती ललिताजी म० आचार्य श्री नानेश के सान्निध्य में प्रव्रजित है। दोनो ने रत्नाकर जैसी सर्वोच्च परीक्षा उत्तीर्ण की है।

आशा है पाठकगण इससे पूरा लाभ उठाकर कल्याण के भागी बनेंगे।

भंवरलाल बोरुंदिया — अध्यक्ष

अमोलकचन्द महता — मंत्री

श्री जैन जवाहर मित्र मण्डल, ब्यावर

❁ अनुक्रमणिका ❁

❀

आचार्य श्रीहुक्मीचंदजी म० सा०

जन्मस्थान	—	टोडारायसिंह (राज०)
पिता	—	श्री रतनचन्दजी चपलोत
माता	—	सोतियादेवी
दीक्षा	—	१८७९, बूंदी
तिथि-मास	—	मार्गशीर्ष, अष्टमी
आनन्दधामगमन	—	जावद (म० प्र०) १९१७
मास तिथि	—	वैशाख शुक्ला पंचमी

卐 संक्षिप्त परिचय 卐

प्राकृतिक सुषमा से युक्त 'टोडा रायसिंह' ग्राम में पूज्य श्री हुक्मीचन्दजी म० सा० ने जन्म धारण किया। तथा स्वाभाविक विरक्ति के आलोक में रमण करते हुए बूंदी नगर में पूज्य श्री लालचन्दजी म० सा० के सान्निध्य मे भागवती दीक्षा अंगीकार की। निर्ग्रन्थ संस्कृति की अक्षुण्णता को बनाये रखने के लिये संयमी जीवन का कठोरता से पालन करते हुए क्रांतिकारी कदम आगे बढ़ाया।

जिससे पूज्यश्री क्षणिक समय के लिए असंतुष्ट भी हुए, किन्तु जब उन्हें यह ज्ञात हुआ कि मुनि श्री हुक्मीचन्दजी अज्ञान-तमिस्रा का नाश करने वाली ज्योतिर्मय मशाल है, वीर लोंकाशाह की भांति जनता में धर्मक्रान्ति का शंखनाद फूंककर नव जागृति उत्पन्न कर रहे है, तब पूज्यश्री बहुत प्रसन्न हुए और जनता के समक्ष कहा कि मुनिश्री हुक्मीचन्दजी तो चौथे आरे की बानगी हैं। इनमें गौतम स्वामी जैसा विनय है तो नंदिषेण जैसी सेवाभावना है आदि।

आपके जीवन की कतिपय प्रमुख विशेषताएं थीं—

(१) २१ वर्ष तक निरन्तर बेले बेले का तप करना।

(२) १३ द्रव्यों से अधिक द्रव्य काम मे नही लेना।

(३) मिष्ठान्न एवं तली चीजों का परित्याग कर शरीर-रक्षा के लिए मात्र रूक्ष-शुष्क आहार करना।

(४) शीत-उष्ण सभी ऋतुओं में एक चादर से अधिक नहीं रखना ।

(५) प्रतिदिन २००० शक्रस्तव (णमोत्थु णं) एवं २००० आगमगाथाओं का स्वाध्याय करना तथा

(६) गुरु के प्रति पूर्ण रूप से विनयावनत रहना, आदि ।

तप-संयम के प्रभाव से अनायास ही आपके जीवन में कई आश्चर्यपूर्ण घटनाएं घटित हुईं । जब आप 'नाथद्वारा'' ग्राम में पधारे व्याख्यान देते समय आकाश से विचित्र प्रकार के सिक्कों की वर्षा हुई । रामपुरा ग्राम पधारते ही फैला हुआ हैजे का प्रकोप शान्त हो गया । कोढ़ी द्वारा चरणस्पर्श करते ही कोढ़ समाप्त हो गया । वैराग्यभावना से आपूरित राजीबाई पारिवारिक मोह से लोह-शृंखलाओं में बांध दी गई थी, उन लोह-शृंखलाओं पर आपकी निर्मल दृष्टि गिरते ही वे कच्चे सूत की तरह तड़ा-तड़ टूट गईं, आदि । आपश्री के जीवन में अन्य भी ऐसी अनेक घटनाएं घटित हुईं ।

जब आप बीकानेर पधारे तब आपके धार्मिक ओजस्वी प्रवचनों से प्रभावित होकर नगर के प्रमुख पांच श्रेष्ठियों ने आप श्री के चरणों में भागवती दीक्षा अंगीकार की । शिष्य बनाने का परित्याग होने से आप उन्हें दीक्षित कर अपने गुरुभ्राता के नेश्राय में कर देते ।

ग्राम-ग्राम में, नगर-नगर में विचरण कर आपने प्रभु महावीर द्वारा उपदिष्ट धर्म का यथातथ्य स्वरूप जनता के समक्ष रखा । जिससे आपकी यशःपताका सर्व दिशाओं में फहराने लगी । नीतिकारों ने सत्य ही कहा है—

यदि सन्ति गुणाः पुंसां, विकसन्त्येव ते स्वयम् ।
नहि कस्तूरिकाऽऽमोदः, शपथेन विभाव्यते ॥

यदि पुरुष में गुण है तो वे स्वय ही विकसित हो जाते है । कस्तूरिका की सुगन्ध को प्रमाणित करने के लिए शपथ खाने की आवश्यकता नही होती ।

पूज्य श्री के द्वारा की गई धर्म-क्रान्ति (क्रियोद्धार) आज भी इन्ही के अष्टम पट्टधर समताविभूति आचार्य नानेश के सान्निध्य में पल्लवित-पुष्पित-फलित हो रही है ।

—❀—

आयुष्य-बन्धनात्पूर्व, यथामति तथागति ।
आयुष्य बन्धनात् पश्चात् यथागति तथामति ॥

[ज्ञान मुनि]

जब तक प्राणी के आयुष्य का बन्धन नहीं होता, तब तक उसके जैसे विचार आयुबंध के समय होते हैं वैसा ही आयुबंध संभवित है । और जब आयुष्य-बंधन हो जाता है, तब जैसी गति होने वाली है वैसे ही विचार उस प्राणी के होने लगते है । ✿

* प्रथममण्टकम् *

(अनुष्टुप् छन्द)

(१)

दुःख-पूर्णे हि संसारे ऐश्वर्यनिलयैर्युतः ।
सुखं प्राप्तुं न शक्नोति, क्षणभंगुरजीवने ॥

भावार्थः—दुःखों से परिपूर्ण इस संसार में ऐश्वर्यों से युक्त भी मनुष्य इस क्षणभंगुर जीवन में सुख पाने में समर्थ नही है ।

(२)

प्रविचार्य च हृत्पिडे क्षयार्थं सर्वकर्मणाम् ।
ससारात् विरतो भूत्वा, श्रामण्ये संयमे रत. ॥

भावार्थ—इस प्रकार हृदय में विचार कर समस्त कर्मों का क्षय करने के लिए ससार से विरक्त होकर आप श्रमणो के सर्व-विरतिरूप सयम मे अनुरक्त हो गए ।

(३)

साधवः समये यस्मिन् जीवने सुष्ठु सादरम् ।
शास्त्रानुसारमाचारं, केऽपि कुर्वन्ति नो भुवि ॥

भावार्थ- जिस समय बहुत से साधु इस क्षेत्र में आगमानुसार सयम-क्रियाओ का परिपूर्ण रूप से पालन नही करते थे ।

(४)

परीषहांश्च संसह्य, इन्द्रियाणां दमः कृतः ।
वृत्तिसंक्षेपतपसा, जीवनं साधु निर्मितम् ॥

भावार्थ—तब आप श्री ने पृथक् विचरण कर परीषहों एवं उपसर्गों को सहन करते हुए इन्द्रियों को विशेष रूप से संयमित किया, वृत्तिसंक्षेप तपश्चरण का आराधन करते हुए द्रव्य-मर्यादा आदि अनेक प्रकार की कठोर प्रतिज्ञाओं का पालन कर जीवन को भव्य बनाया ।

(५)

धृत्वा धृतिं विहारश्च, ग्रामे ग्रामे कृतो महान् ।
यस्य क्रिया-प्रभायाश्च, विस्तारोऽभूच्च सर्वतः ॥

भावार्थ—संयम-जीवन का कठोरता के साथ धैर्यपूर्वक पालन करते हुए ग्राम-ग्राम में उग्र विहार किया, जिससे पूज्यश्री की संयमाचरण की दिव्य प्रभा का अत्यधिक विस्तार हुआ ।

(६)

कर्मणाञ्च विनाशाय, विदधे सुतपःक्रियाम् ।
वह्नौ स्वर्णसमा शुद्धिरात्मनो विहिता हिता ॥

भावार्थ—कर्मों का पूर्ण रूप से क्षय करने के लिए २१ वर्ष तक वेले वेले की कठोर तपश्चर्या की । यथा-स्वर्ण की शुद्धि अग्नि से होती है तथैव आप श्री ने हितकर आत्मशुद्धि तपश्चरण से की ।

(७)

अहिंसासत्यमस्तेयं, ब्रह्मचर्यापरिग्रहम् ।
सिद्धान्तानां स्वरूपं च, जनस्याग्रे निरूपितम् ।।

भावार्थ—अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह का तथा जिनोपदिष्ट धर्म के मूलभूत सिद्धान्तों का विविध प्रकार का स्वरूप देश की जनता के समक्ष रखा।

(८)

त्यागवैराग्यभावेन, श्रमणत्वं विकासितम् ।
तस्यैव सुप्रभावेण, समाजोऽयं प्रदीप्यते ।।

भावार्थ त्याग-वैराग्य की प्रबल भावना से श्रमणत्व का अर्थात् चतुर्विध संघ का विस्तार किया। उसी के सुप्रभाव से आज भी सम्पूर्ण समाज देदीप्यमान हो रहा है।

ज्ञान जितना मन की गहरी परतो मे उतरता जाएगा उतना ही उसका वैशिष्ट्य भी प्रकट होता जाएगा। जो कुछ जाना है वह सही है या नही—उसकी सबसे बड़ी कसौटी शुद्ध आत्मानुभूति ही होती है। और आत्मानुभूति को सजग एवं सक्षम बनाने का मार्ग चिन्तन का मार्ग है। जो चिन्तन मे रमता है, निश्चित मानिए वह सतत जागृत भी रहता है।

[नानेश-वचनामृत]

卐 द्वितीयमष्टकम् 卐

(त्रोटक छन्द)

(१)

गृह-मोह-ममत्व–विनाशकरं,
शुभ-संयम-भाव-रत विरतम् ।
सुसमाधियुतं–गणिकीर्तिधरं,
प्रणमामि महामुनिहुक्मिगुरुम् ।।

भावार्थ—गृह-परिवार सम्बन्धी मोह-ममत्व का नाश करने वाले, ससार से विरत, प्रशस्त सयम भाव में रत, उत्तम समाधि से युक्त, आचार्यों के योग्य कीर्ति को धारण करने वाले–महामुनि श्री हुक्मीचन्द्रजी महाराज को मै नमस्कार करता हूँ।

(२)

प्रशमादि–विकास गुणैः कलित-
मुपदेश-सुधा-वलित मुदितम् ।
महिते निज-मुक्ति-पथे निरतं,
प्रणमामि महामुनिहुक्मिगुरुम् ।।

भावार्थ—शम-सवेगादि विकास के गुणों से शोभित, अमृतोपम उपदेश को प्रवाहित करने वाले, प्रसन्नचित्त, प्रशस्त मोक्षपथ में निरत महामुनि ....

(३)

भव-पातक-मान-रुजा रहितं,
सुखदायक-भाव-युतं सततं ।
भवभीतिहरं शिव-सत्यवरं,
प्रणमामि महामुनिहुक्मिगुरुम् ।।

भावार्थ—जन्म-मरणरूप संसार के गर्त में गिराने वाले अभिमान रूप आन्तरिक रोग से रहित, निरन्तर सुखदायक भाव से युक्त, भव-भीति को दूर करने वाले, शिव-सत्य का वरण करने वाले महामुनि........

(४)

तपसा सहितं विदुषां महितं,
शशि-पूर्ण-सुशोभितदिव्यमुखम् ।
रवि-तुल्य-विभासित—दीप्तिधरं,
प्रणमामि महामुनिहुक्मिगुरुम् ।।

भावार्थ– २१ वर्ष पर्यंत बेले २ के तप से युक्त, विद्वानों द्वारा पूजनीय, पूर्णिमा के पूर्ण चन्द्रमा के समान दिव्य मुख वाले, सूर्य के समान विभासित दीप्ति से युक्त महामुनि... ....

(५)

मनसा वचसा वपुषा विमलं,
करुणा-धिषणा-गरिमादियुतम् ।

सुनयैः सुगुणैः सुकृतैरनघं,
प्रणमामि महामुनिहुक्मिगुरुम् ।।

भावार्थ—मन वचन और वपु (शरीर) से निर्मल, करुणा-धिषणा (बुद्धि) तथा गरिमादि गुणों से युक्त, सुनयों से, सुगुणों से एव सुकृतों से अनवद्य-चारित्री महामुनि·······

(६)

नगरे नगरे सुख-शान्तिकरं,
बहु-शिष्य-जनैः विनयाभिनुतम् ।
निजकर्मविदारकरं विशदं,
प्रणमामि-महामुनिहुक्मिगुरुम् ।।

भावार्थ— नगर नगर में सुख शान्ति का संचार करने वाले, अपने शिष्यजनो द्वारा विनय पूर्वक अभिवन्दित, उज्ज्वल चरित्र-युक्त, आत्मा को मलीमस बनाने वाले कर्मों का विनाश करने वाल निर्मल महामुनि···· ···

(७)

शरणागत–रक्षणदक्षवरं,
जगति प्रथितं सुयशोभरितम् ।
जनसंकटनाशक-भक्तिरतं,
प्रणमामि महामुनिहुक्मिगुरुम् ।।

भावार्थ—शरणागत प्राणियों की रक्षा करने में दक्ष जनों में श्रेष्ठ जगतप्रसिद्ध सुयश से परिपूर्ण, जन-जन के सकट नाशक, परमात्मभक्ति में रत महामुनि····

(८)

भव-सागर-पंक-निमग्ननृणां,

जिन-भाषितबोध-सुखं प्रददौ ।

तमह गुण-सागर-बुद्धिनिधिं,

प्रणमामि महामुनिहुक्मिगुरुम् ।।

भावार्थ—भव-सागर-पंक (कीचड़) में निमग्न मनुष्यो को जिन्होंने सुखकारी जिनोपदिष्ट बोध प्रदान किया, उन गुणों के सागर और बुद्धि के निधान महामुनि.......

छंद अनुष्टुप् – प्रशस्ति

गुरुहुक्म्यष्टकं स्तोत्रं,

मुनिज्ञानेन निर्मितम् ।

पठन्ति ये नराः भक्त्या,

सिद्धिसौधं व्रजन्ति ते ।।

भावार्थ—मुनि 'ज्ञान' के द्वारा निर्मित पूज्य हुक्म्यष्टक स्तोत्र को जो मनुष्य भक्तिपूर्वक पठन-श्रवण करते हैं, वे मुक्ति रूपी महल को प्राप्त करते है ।

—卐—

स्वार्थ को एक बांध की तरह माना जा सकता है । जहां इसके सुनियंत्रण मे जरासी भी ढील आई कि फिर वह सारी पाल तोड़कर नैतिकता को डुबो देता है ।

(ज्ञानेन्द-वचनामृत)

आचार्य श्रीशिवलालजी म० सा०

जीवन-रेखा

जन्मस्थान	—	धामनिया (म० प्र०)
दीक्षास्थल	—	१८९१, बूंदी (राज०)
युवाचार्यपद	—	१९०७, बीकानेर
आचार्यपद	—	१९१७, जावद
आनन्द धामप्राप्ति	—	१९३३, जावद (म० प्र०)
मास तिथि	—	पोष शुक्ला षष्ठी

संक्षिप्त परिचय

पूज्य श्री शिवलालजी म० सा० का जन्म मध्यप्रदेश के धामनिया ग्राम में हुआ। संसार की असारता एवं मुक्ति के अक्षय सुख के स्वरूप को समझ कर मुनिपुंगव श्री दयालजी म० की निश्राय में भागवती दीक्षा अंगीकार की, तथापि आप प्रायः पूज्य श्री हुक्मीचन्दजी म० सा० के समीप ही निवास करते थे। उनके सान्निध्य के प्रभाव से आपकी प्रतिभा मे निखार आया, फलस्वरूप आप दिग्गज विद्वान् के रूप मे जनता के समक्ष आये।

पूज्य श्री की तरह ही आप भी स्वाध्यायप्रेमी, आचार-विचार मे महान् निष्ठावान् एवं परम श्रद्धावान् थे।

पूज्यश्री के पास कोई भी जिज्ञासु भाई-बहन आते तो पूज्यश्री जी के स्वाध्याय, मौन, तपाराधना में तल्लीन रहने के कारण उन जिज्ञासुओं की जिज्ञासाओं का समाधान आप ही करते। जिज्ञासु सटीक समाधान को प्राप्त कर प्रसन्न हो जाते थे।

आपश्री की कवित्वशक्ति अनूठी थी। भक्ति-रस से परिपूर्ण जीवनस्पर्शी और उपदेशात्मक आदि सभी प्रकार से आप भजन-रचना करते थे जिनकी मधुर स्वरलहरियां कर्णगह्वरो मे पहुंचते ही जन-मानस को वशीकरण मंत्र की भांति आकर्षित कर लेती थीं।

आपके जीवन मे ज्ञान और क्रिया का अनुपम संयोग हुआ था। प्रखर विद्वत्ता के साथ ही कर्म-कलिमल को नाश करने के लिए अपने आत्मा को तप-अग्नि मे निखारा था।

अर्थात् आप श्री ने ३५ वर्ष पर्यन्त (लगभग) एकान्तर तप किया था।

इस प्रकार आचार-विचार में आप श्री की परिपूर्ण योग्यता जानकर पूज्य श्री हुक्मीचन्दजी म० सा० ने थली के प्रमुख नगर बीकानेर में चतुर्विध संघ के समक्ष यह उद्घोषित किया—

'भव्य प्राणियो ! मुनि श्री शिवलालजी ही मेरे बाद आप सबके नायक है। आप सभी इनकी आज्ञा के अनुसार कार्य करें।' पूज्य श्री की घोषणा को श्रवण कर संघ के सभी सदस्यों ने सहर्ष स्वीकार किया।

इस प्रकार पूज्य श्री हुक्मीचन्दजी म० के पट्ट पर विराजकर आचार्य श्री शिवलालजी म० सा० ने चतुर्विध संघ की अत्यधिक प्रभावना की।

सत्यस्य प्रबला शक्तिः, सत्यस्य सबलं बलम्।
सत्यमेवानघं वित्तं, प्रयच्छति सुखं ध्रुवम्॥

[ज्ञान मुनि]

जिसके मन वचन काययोग में सत्य का निवास है उसकी शक्ति सर्वोपरि है। उसका बल, प्रबल-अजेय है, सत्य ही निर्दोष सम्पत्ति है जो सदा-सर्वदा एकान्त आत्मिक सुख देती है।

* अष्टकम् *

(१)

विशिष्टलक्षणैर्युक्तो, धामनियाख्यग्रामके ।
अन्वर्थनामा महाभागः समुद्भूतः शिवो गणी ।।

भावार्थ—मध्यप्रदेश के अन्तर्गत धामनिया नामक ग्राम में अर्थ के अनुसार नाम वाले अर्थात् शिव-कल्याणकारी एव शुभ लक्षणों से सम्पन्न शिवाचार्य (आचार्य श्री शिवलालजी म०) का जन्म हुआ।

(२)

संपूर्णे शैशवे काले, जैन-धर्मः समाश्रितः ।
क्षणिकान् कामभोगांश्च, समाज्ञाय जहौ शिवः ।।

भावार्थ—बाल्यकाल के पूर्ण होने पर शिवाचार्य ने काम-भोगों की क्षणिकता को जानकर उनका परित्याग किया तथा आर्हत धर्म को स्वीकार किया।

(३)

संसारासारतां ज्ञात्वा, शुभ्रसंयमगुणांस्तथा,
परमात्मपदं प्राप्तुं, श्रमणत्वं च धारितम् ।।

भावार्थ—संसार की असारता एव संयम के निर्मल गुणों या [illegible] संयम के गुणों को जानकर परमात्मपद को प्राप्त करने के लिए श्रमणत्व अवस्था को अंगीकार किया।

(४)

आत्मानं पावनं कर्तुं, तपस्याकरणे रतः ।
स्वर्णतुल्या कृता शुद्धिः, स्वात्मनो वृद्धिकारिका ॥

भावार्थ—आपने आत्मा को निर्मल करने के लिए लगभग ३५ वर्ष तक निरन्तर एकान्तर तप किया। जैसे अग्निप्रयोग से स्वर्ण की शुद्धि होती है, उसी प्रकार आपने तपश्चर्या द्वारा गुणों की वृद्धिकारक आत्म-शुद्धि की।

(५)

श्रमणानां समाचारी योक्ता भगवता स्वयम् ।
मूलोत्तर-गुणान्सर्वान् बोधयामास देशनैः ॥

भावार्थ—प्रभु महावीर ने श्रमणों को पालन करने योग्य जो समाचारी स्वयं अपने मुखारविन्द से फरमाई है उसे तथा मूल व उत्तर गुणों को धर्मदेशना के द्वारा जनता के समक्ष रखा।

(६)

नराणामुपदेशेन, प्रदत्तं जीवनं नवम् ।
देशनां च सुधां कृत्वा, मर्त्याः धर्मे दृढीकृताः ॥

भावार्थ—भव्य प्राणियों को जीवन सुखकारी आत्मबोध प्रदान कर जीवन की नई दिशा प्रदर्शित की। देशना-सुधा का पान करा कर धर्म में सुदृढ़ बनाया।

(७)

अधर्मस्य विनाशार्थं सुधर्मस्य प्रचारणे ।
देशे-देशे भ्रमित्वा हि, स्याद्वादादि प्रसारितम् ॥

भावार्थ—कुधर्म का नाश करने के लिए और सुधर्म का प्रचार करने के लिए देश-देश में भ्रमण कर अपनी प्रखर विद्वत्ता से जिन-भाषित स्याद्वाद आदि सिद्धान्तों को विविध प्रकार से प्रचारित किया।

(८)

जीवनान्तं समाज्ञाय, अच्युदयाय ददौ पदम् ।
देहोत्सर्गः कृतो येन, भव्यपण्डितमृत्युना ॥

भावार्थ—अपने जीवन के अवसान को जानकर अपने सुयोग्य शिष्य श्री उदयसागरजी को युवाचार्य पद प्रदान किया। तत्पश्चात् भव्य जीवों को ही प्राप्त होने योग्य पंडितमरण से देह का उत्सर्ग किया।

आत्मा का अनन्त ज्ञान और अनन्त शक्ति जो ईश्वरत्व के रूप में फूटकर प्रदीप्त बनती है, वही प्रदीप्तता प्रत्येक आत्मा में समाई हुई है। किन्तु कुकर्मों की राख संसारिक आत्माओं पर छाई होने से जो तेज प्रकट होना चाहिए वह दबा रहता है। आवश्यकता सतत सत्पुरुषार्थ की।

[नानेश वचनामृत]

आचार्य श्रीउदयसागरजी म० सा०

जन्म-स्थान	—	१८७६, जोधपुर
पिता	—	श्री नथमलजी खीवेसरा
माता	—	श्रीमती जीवुदेवी
दीक्षा	—	१८९८, बूंदी
मास-तिथि	—	चैत्र शुक्ला एकादशी
आनन्दधामप्राप्ति	—	१९५४, रतलाम (म० प्र०)
मासतिथि	—	[illegible] दशमी

卐 संक्षिप्त परिचय 卐

आचार्य श्रीहुक्मीचन्दजी म० सा० के तृतीय पट्टधर पूज्य श्रीउदयसागरजी म० सा० हुये ।

आपश्री का जन्म मारवाड़ के प्रमुख नगर जोधपुर में हुआ था।

जब आपने किशोरावस्था को पारकर युवावस्था मे प्रवेश किया तब आपके जीवन में एक विशेष घटना घटित हुई जिसके अमिट प्रभाव से आपका मन ससार से उद्विग्न हो उठा और आपने संसार-परित्याग कर सर्वसुख-प्रदायिनी भवभयहारिणी जैनेश्वरी दीक्षा अगीकार कर ली ।

वह विशेष घटना यह है-एकदा माता-पिता ने अपने लाडले पुत्र के शरीर पर यौवन के चिह्नों को परिस्फुटित होते हुए देखकर ससार की मोहजनित परम्परा के अनुसार हो पुत्र को वैवाहिक बन्धनो में बाधने का निश्चय किया । तदनुरूप सर्वगुणसम्पन्न कन्या के साथ विवाह निर्णीत कर दिया ।

निश्चित तिथि को विवाह करने के लिए धूमधाम के साथ बरात वधूस्थान पहुंची । वैवाहिक कार्यक्रम प्रारम्भ होने लगा । [illegible] चवरी में फेरे के लिए पहुंचे तब आपका साफा चंवरी के [illegible] में अटक जाने से मस्तक से नीचे गिर गया । सहिनाए

हास्य-विनोद करने लगीं। भाई लोग साफा मस्तक पर रखने की शीघ्रता करने लगे।

परन्तु साफा क्या गिरा मानो अनादिकालीन कामविकार जनित मोह-दशा ही हटकर दूर गिर पडी। उसी समय आपका विचार ऊर्ध्वगामी बना। जो साफा एक बार सिर से नीचे गिर चुका है उसे दूसरी बार क्या धारण किया जाए! आप विना विवाह किये ही विवाह-मण्डप से लौट गए।

ममत्व से समत्व की ओर, राग से विराग की ओर, अंधकार से प्रकाश की ओर, अज्ञान से ज्ञान की ओर अग्रसर हो गए। आचार्य श्रीशिवलालजी म० के शिष्य श्रीहर्षचन्दजी म० सा० के पास दीक्षा अंगीकार कर "विणओ धम्मस्स मूलं:" के सिद्धान्त को ध्यान में रखते हुए अत्यन्त विनम्रता के साथ आपने ज्ञानार्जन किया।

आचार्य श्री की प्रखर-मनीषा ने आपके जीवन को परख लिया और आपको संघ के समक्ष युवाचार्य पद पर सुशोभित कर दिया।

आपकी उपदेश-शैली अत्युत्तम थी, जिसे श्रवण करने के लिए जैनेतर जनता भी बड़ी संख्या में उपस्थित होती थी।

आपके शासन-काल में जैन-समाज का बहुमुखी विकास हुआ। हालांकि आप एक संप्रदाय के आचार्य थे तथापि समग्र स्थानकवासी समाज आपको अपना नेता मानता था।

रामपुरा ग्राम में शास्त्रवेत्ता केदारजी गांग रहते थे। उन्होंने

आपकी ज्ञानार्जन की असाधारण जिज्ञासा एवं विनीतता देखकर आपको ३२ शास्त्रों का अर्थ सहित गंभीर अध्ययन कराया।

सघ के आचार्य होते हुए भी आपके जीवन में अद्‌भुत सरलता थी। एक वार आप सोजत में पधारे तो वहां एक साधु थे। उनके विषय मे आपने पूछा तो लोगों ने कहा–अजी वह शिथिलाचारी है। तव आचार्यश्री ने फरमाया कि–'ऐसा मत कहो।' वे मेरे उपकारी हैं, मैं वहां जाऊंगा। और आप वहां पहुंच भी गये। इस घटना का उन साधु के जीवन पर आश्चर्यजनक प्रभाव पड़ा।

आप ही नहीं आपके सान्निध्य में रहने वाले संत भी विविध विरल विशेषताओं से युक्त थे। कोई विनयवान् था, तो कोई क्षमासागर, तो कोई विद्वान्।

एक उदाहरण लीजिए–एक वार पूज्य श्री के पास एक प्रोफेसर आये। कहने लगे कि–'आपका सर्वोत्तम विनयवान् शिष्य कौन है? जरा मैं उन विनयमूर्ति के दर्शन कर लूं।' तव पूज्यश्री ने कुछ भी न कहते हुए संत को वुलाया। वह विनय भाव से उपस्थित हुआ। पूज्यश्री ने उसे विना कुछ कहे ही वापस भेज दिया। इसी प्रकार उन्हें एक वार, दो वार ही नहीं, अनेकों वार वुलाया। फिर भी विना किसी हिचकिचाहट के वह संत आते रहे। तव प्रोफेसर ने कहा भगवन्! वस वस, मै समझ गया। मैं जान गया कि इनमें कितना विनयभाव है। अव आप इन्हें वार वार वुलाकर कष्ट न दें।

प्रोफेसर साहव विनयमूर्ति की विनीतता तथा गुरु के प्रति शिष्य की अगाध श्रद्धा का प्रत्यक्ष दर्शन कर आश्चर्यान्वित हुए।

इसी प्रकार पूज्य श्री के एक शिष्य थे जिनका नाम श्री चतुर्भुजजी म० सा० था, जो क्षमासागर के नाम से प्रसिद्ध थे, उन्हें क्रोध करना तो आता ही नहीं था। वे यह अच्छी तरह से जानते थे कि क्रोधरूपी अग्नि आत्मा के स्फटिक के समान स्वच्छ गुणों को भस्म कर देती है।

इन मुनिराज के जीवन की एक घटना है—

एक बार किसी साधु के हाथ से सहसा पात्र (लकड़ी का भाजन) छूट जाने से उसके टुकड़े हो गये। उस समय आचार्य-श्री जी शौच-निवारण करने के लिये बाहर पधारे हुए थे। जब आचार्य श्री जी वापस पधारे, सयोगवश वे साधुजी किसी कार्यवश बाहर गये हुए। स्थानक में क्षमासागर श्री चतुर्भुजजी म० विद्यमान थे। आचार्य श्री जी ने पात्र को विखण्डित देखा, तब उन्हें यह ज्ञात हुआ कि (संभव है) इन्ही के हाथ से पात्र फूटा हो। अतः आपने उन्हें कर्तव्यदृष्टि से उपालम्भ दिया। क्षमासागर मुनिराज इसे मौन-भाव से श्रवण करते रहे। पूज्य श्री द्वारा दिये गये उपालंभ को समभाव से सहन करते हुए अपना अहोभाग्य मानने लगे कि अहो! मुझे आज पूज्य श्री जी के मुख से शिक्षा श्रवण करने को मिल रही है।

इतने में ही जिनके हाथ से पात्र खण्डित हुआ था वे मुनिराज आये। जब पूज्य श्री को उपालंभ देते हुए देखा तो वे कहने लगे-

'भगवन् ! पात्र तो मेरे द्वारा खण्डित हुआ है, अपराधी मैं हूँ, ये नही !'

तव पूज्यश्री ने क्षमासागरजी म० सा० से कहा–अरे ! मैने तुम्हे इतना उपालंभ दिया और तुमने तनिक भी प्रतिवाद नही किया–स्पष्टीकरण न किया। इतना तो कह देते कि मेरे द्वारा पात्र खडित नही हुआ है।

तव क्षमासागर मुनिराज वोले—प्रभो ! वैसे तो आपसे कभी ऐसे उपालंभमय शब्द सुनने को नही मिलते, किन्तु मौन के द्वारा आपका उपालंभ रूपी प्रसाद मिला। दुर्लभ शिक्षा प्राप्त हुई। इससे मुझे तो बहुत लाभ ही हुआ है।

ऐसी क्षमाशीलता से ही आप (चतुर्भुजजी म० सा०) क्षमासागर के नाम से प्रसिद्ध हुए।

पूज्यश्री के सान्निध्य में क्रियोद्धारक महान् क्रान्तिकारी पूज्यश्री हुक्मीचन्दजी म० द्वारा की गई क्रान्ति प्रगतिशील हुई।

卐

रत्नेषु कोहिनूरः स्याद् गोशीर्षं चन्दनेषु च।
गरुडः पक्षिषु श्रेष्ठस्तथा सत्यं व्रतेषु च॥

—ज्ञान मुनि

जिस प्रकार रत्नों में कोहिनूर, चन्दनों मे गोशीर्ष और पक्षियों मे गरुड श्रेष्ठ है, उसी प्रकार निश्चय ही व्रतों में सत्य श्रेष्ठ है। [यह आपेक्षिक कथन है]

* अष्टकम् *

(१)

जोधपुरमिति विख्यातं, मरुभूमिविभूषणम् ।
नगरं प्रचुरा यत्र जैनधर्मानुयायिनः ॥

भावार्थः—मरुधरा का अलंकार रूप जोधपुर नाम से प्रसिद्ध नगर है, जिसमें जैन धर्म के अनुयायी विपुल संख्या में निवास करते हैं ।

(२)

एकदा नगरे रम्ये, गुणैः सर्वैः समायुतः ।
रविरिव प्रभोपेतः, उदयस्तत्रोदितो महान् ॥

भावार्थः—एकदा इस रमणीक नगर में सर्व गुणों से संपन्न तथा सूर्य के समान प्रभा से युक्त 'उदय' शिशु का उदय-समुद्भव (जन्म) हुआ ।

(३)

प्रसृते सुख-शान्ती च, जननी, जनको हृदि ।
प्राप्य सल्लक्षणं पुत्रं, मुदिता मुदितस्तथा ॥

भावार्थः—सुन्दर एवं प्रशस्त शुभ लक्षणों से युक्त पुत्र को प्राप्त कर माता के मन में वहुत प्रसन्नता हुई, पिता का चित्त भी आह्लादित हो उठा ।

(४)

शशीव शुक्लपक्षस्य, वर्द्धितश्च दिने दिने ।
यौवनं च यदा प्राप्तो गत उद्वाहमण्डपे ॥

भावार्थ—शुक्ल पक्ष के चन्द्रमा की कलाओं के समान बालक उदय अहर्निश वृद्धि को प्राप्त होते गए। फिर क्रमशः शैशव-अवस्था को पार कर जब यौवन अवस्था में प्रवेश किया तो सांसारिक परंपरा के अनुसार आप विवाह करने के लिए मण्डप में गये।

(५)

उष्णीषं, पतितं शीर्षात्, भोगाच्च विरतस्तदा ।
श्रमणत्व गृहीतं तन् निजात्मा निर्मलः कृतः ॥

भावार्थ - तब वहाँ आपके मस्तक से साफा नीचे गिर गया। इस घटना से क्षणिक काम-भोग से आप पूर्ण विरक्त हो गये। तदनन्तर भवाब्धि को पार कराने वाले पोत समान संयम को अंगीकार कर आत्मिक निर्मलता में लीन हो गये।

(६)

ध्याने मुक्तोविदैर्विज्ञैः सुरासुरेन्द्रदुर्जयम् ।
दिव्यभोगमल्लं, जितमात्मबलेन हि ॥

भावार्थ—ध्यानज्ञान में पारगत तथा विवेकशील उदयाचार्य ने सुरेन्द्रों एवं असुरेन्द्रों द्वारा भी अजेय दिव्य-भोग रूप मल्ल (योद्धा) को अपने आत्म-बल से जीत लिया।

(७)

अनेकान्तकृतान्तज्ञो, मुमुक्षूणां शिरोमणिः ।
ज्ञानाचारेण संपन्नः, गणीशोदयसागरः ॥

भावार्थ—स्याद्वाद सिद्धान्त के रहस्य के विज्ञाता, मुक्ति के इच्छुक भव्यजनों में शिरोमणि श्रीमद् उदयाचार्य ने ज्ञान-पूर्वक आचरण कर स्वात्मशुद्धि की ।

(८)

एकादशाङ्गशास्त्राणां, पठने पाठने रतः ।
संयमाराधको धीमान्, समाधिमरणं गतः ॥

भावार्थ—विशुद्ध बुद्धि से विभूषित वे एकादशाङ्ग शास्त्रों के पठन-पाठन में लीन रहे. निरन्तर संयम की आराधना मे तत्पर रहे और अन्त में समाधिपूर्वक कालधर्म को प्राप्त हुए।

●

सर्वव्यापिनी, पिशाचिनी, विषमता का मूल मनुष्य की मनोवृत्ति में है । जैसे हजारों गज भूमि मे फैले एक वट वृक्ष का वीज राई जितना होता है, उसी प्रकार इस विषमता का वोज भी छोटा ही है । किन्तु है कठिन अवश्य । मनुष्य की मनोवृत्ति मे जन्मा यह वीज वाह्य और आन्तरिक जगत् में प्रस्फुटित होकर फैलता है ।

[नानेश वचनामृत]

आचार्य श्रीचौथमलजी म० सा०

जीवन-रेखा

जन्मस्थान — पाली (राज०)

दीक्षास्थल — १९०९, बूंदी (राज०)

मास तिथि — चैत्र शुक्ला द्वादशी

युवाचार्यपद — १९५४, मार्गशीर्ष शुक्ला त्रयोदशी

आचार्यपद — १९५४, रतलाम

मास तिथि — फाल्गुन कृष्णा चौथ

आनन्दधाम-गमन — १९५७, रतलाम

मास तिथि — कार्तिक शुक्ला अष्टमी

卐

卐 संक्षिप्त परिचय 卐

आचार्य श्रीचौथमलजी महाराज हुक्मगच्छ के चतुर्थ आचार्य हुए। आपका जन्म कांठा प्रान्त के प्रमुख नगर पाली मे हुआ था।

ससार से उद्विग्न होकर सच्चे शाश्वत सुख की पिपासा को शान्त करने के लिए सर्व संतापहारिणी जैनेश्वरी दीक्षा बूंदी शहर में स० १९०९ में चैत्र शुक्ला द्वादशी को अगीकार की।

मलीमस वनी हुई आत्मा को निर्मल-निरंजन निराकार वनाने के लिए "पढमं नाण तओ दया" के सिद्धान्तानुसार ज्ञान-पूर्वक संयम का वड़ी ही सतर्कता के साथ तन, मन और वचन से पालन किया।

आपका मन जितना सरल सहज था, उतना ही संयम के प्रति सतर्क था। संयम की शिथिलता के लिए वे "वज्रादपि कठोराणि" (वज्र से भी कठोर) थे तो संयम-साधना में "मृदूनि कुसुमादपि" (फूल से भी कोमल) थे।

जिनकी ज्ञान-पूर्ण क्रियाराधना आज भी साधु-साध्वियों के लिए जाज्वल्यमान प्रकाश-स्तम्भ वनी हुई है। उनकी उत्कृष्ट क्रियाराधना का एक उदाहरण इस प्रकार है—

आपकी वृद्धावस्था के कारण आपका मरणधर्मा शरीर जव जराजीर्ण हो गया था, तव भी आप सावुत्व की नित्यचर्या मे पूर्णतया सावधान रहते थे। एक वार जव सन्ध्या का प्रतिक्रमण अस्वस्थ होने से लकड़ी के सहारे खड़े होकर कर रहे थे उस

समय एक श्रावक ने आपको बड़ी ही विनम्रता के साथ कहा- 'भगवन् ! आपका आत्मबल अपरिमित है, किन्तु उसका आधार शरीर शीर्ण होता हुआ चला जा रहा है, अतः आप खड़े खड़े प्रतिक्रमण न करके विराजकर कर लें तो क्या हानि है ?'

तब आचार्य श्री ने फरमाया-'श्रावकजी ! अगर मैं बैठा-बैठा प्रतिक्रमण करूंगा तो संत सोये सोये करेंगे ।' ऐसी थी संयम के प्रति सजगता-सतर्कता । इससे पता चलता है कि आचार्य में कितनी दीर्घदृष्टि होनी चाहिए और किस प्रकार अपने आचार द्वारा शिष्यों के समक्ष आदर्श उपस्थित करना चाहिए ।

कठोर साधना के धनी आपने बहुत ही कम, लगभग ३ वर्ष तक आचार्य पद पर रहकर चतुर्विध संघ में धर्मक्रांति का बिगुल बजाया ।

अन्त में १९५७ की कार्तिक शुक्ला अष्टमी को रतलाम में भौतिक शरीर का परित्याग कर आपने चिर सुख की ओर प्रयाण किया ।

निजापरे नरश्रेष्ठ उपकारं करोति च ।
वपुर्नो गणयित्वा स्वं, परस्य रक्षणे रतः ॥

[ज्ञान मुनि]

नरपुंगव सदा ही निज पर का उपकार करते हैं । वे अपने शरीर की परवाह न करके दूसरों की रक्षा में लगे रहते हैं । यही उनकी महानता है ।

卐 संक्षिप्त परिचय 卐

आचार्य श्रीचौथमलजी महाराज हुक्मगच्छ के चतुर्थ आचार्य हुए। आपका जन्म कांठा प्रान्त के प्रमुख नगर पाली मे हुआ था।

ससार से उद्विग्न होकर सच्चे शाश्वत सुख की पिपासा को शान्त करने के लिए सर्व संतापहारिणी जैनेश्वरी दीक्षा बूंदी शहर में स० १६०६ में चैत्र शुक्ला द्वादशी को अगीकार की।

मलीमस बनी हुई आत्मा को निर्मल-निरंजन निराकार बनाने के लिए "पढमं नाणं तओ दया" के सिद्धान्तानुसार ज्ञान-पूर्वक संयम का बड़ी ही सतर्कता के साथ तन, मन और वचन से पालन किया।

आपका मन जितना सरल सहज था, उतना ही संयम के प्रति सतर्क था। संयम की शिथिलता के लिए वे "वज्रादपि कठोराणि" (वज्र से भी कठोर) थे तो संयम-साधना में "मृदूनि कुसुमादपि" (फूल से भी कोमल) थे।

जिनकी ज्ञान-पूर्ण क्रियाराधना आज भी साधु-साध्वियों के लिए जाज्वल्यमान प्रकाश-स्तम्भ बनी हुई है। उनकी उत्कृष्ट क्रियाराधना का एक उदाहरण इस प्रकार है—

आपकी वृद्धावस्था के कारण आपका मरणधर्मा शरीर जब जराजीर्ण हो गया था, तब भी आप साधुत्व की नित्यचर्या मे पूर्णतया सावधान रहते थे। एक बार जब सन्ध्या का प्रतिक्रमण अस्वस्थ होने से लकड़ी के सहारे खडे होकर कर रहे थे उस

समय एक श्रावक ने आपको बड़ी ही विनम्रता के साथ कहा-'भगवन् ! आपका आत्मबल अपरिमित है, किन्तु उसका आधार शरीर शीर्ण होता हुआ चला जा रहा है, अतः आप खड़े खडे प्रतिक्रमण न करके विराजकर कर ले तो क्या हानि है ?'

तब आचार्य श्री ने फरमाया-'श्रावकजी ! अगर मैं बैठा-बैठा प्रतिक्रमण करूंगा तो संत सोये सोये करेगें ।' ऐसी थी सयम के प्रति सजगता-सतर्कता । इससे पता चलता है कि आचार्य में कितनी दीर्घदृष्टि होनी चाहिए और किस प्रकार अपने आचार द्वारा शिष्यों के समक्ष आदर्श उपस्थित करना चाहिए ।

कठोर साधना के धनी आपने बहुत ही कम, लगभग ३ वर्ष तक आचार्य पद पर रहकर चतुर्विध सघ में धर्मक्राति का बिगुल बजाया ।

अन्त में १९५७ को कार्तिक शुक्ला अष्टमी को रतलाम मे भौतिक शरीर का परित्याग कर आपने चिर सुख की ओर प्रयाण किया ।

निजाऽपरे नरश्रेष्ठ उपकारं करोति च ।
वपुर्नो गणयित्वा स्वं, परस्य रक्षणे रत: ।।

[ज्ञान मुनि]

नरपुगव सदा ही निज पर का उपकार करते है । वे अपने शरीर की परवाह न करके दूसरों की रक्षा में लगे रहते हैं । यही उनकी महानता है ।

ॐ अष्टकम् ॐ

(१)

मरुप्रदेशे पालीति, नगरमस्ति सुन्दरम् ।
तत्र चौथ-रविर्जातः, तस्य ज्योतिर्विभासितम् ।।

भावार्थ—मरुस्थल प्रांत में पाली नामक भव्य नगर है। इस नगर में बाल-सूर्य की भांति गुणपुंज चौथाचार्य (आचार्य श्री चौथमलजी महाराज) विभासित हुए, जिनकी साधनामय ज्योति दिग्-दिगन्त में विकीर्ण हुई।

(२)

पापतमोविनाशाय, प्रकाशाय निजात्मनः ।
ज्ञात्वाऽसारं च संसारं, भोगाच्च विरतोऽभवत् ।।

भावार्थ—पाप रूपी काली घटा का नाश करने के लिए तथा आत्मा के स्वाभाविक शुद्ध स्वरूप को विकसित करने के लिए संसार की असारता का बोध प्राप्त कर आप सांसारिक भोगोपभोग से विरक्त हो गए।

(३)

वीरभूमौ समुद्भूय, सुवीरो भवितुं महान् ।
परीषहोपसर्गाश्च, साम्येन शमिताः सदा ।।

वीरभूमि में उत्पन्न होकर कर्म-विजेता बनने के लिए आपने परिषहों एव उपसर्गों को साम्य भाव से सदा समाहित किया।

(४)

विचाराऽचारपक्षेषु, जनस्याग्रे सुदेशनाम् ।
दत्वा जिनेन्द्रधर्मस्य, ज्ञानरश्मिर्विभासिता ।।

भावार्थ – जनमेदिनी के समक्ष जिनोपदिष्ट विचार, एवं आचार के बहुमुखी स्वरूप को समझाकर जिन धर्म की अलौकिक ज्ञानरश्मि को स्वमनीषा से विभासित किया ।

(५)

शास्त्र-ज्ञानं समादाय, दीप्ते गणिवरे पदे ।
क्रियया निर्मलो भूत्वा, शुद्धिस्स्वस्यात्मनः कृता ।।

भावार्थ – शास्त्रज्ञान को प्राप्त करके गणिवर-आचार्य-पद को सुशोभित किया । बोधपूर्ण कठोरतम आचरण से निर्मल होकर आत्मिक स्वरूप में रमण करने लगे-आत्मशुद्धि की ।

(६)

ज्ञान-ध्यान-समायुक्तः, साधनायां रतो दृढः ।
कृत्वाऽत्युग्रतपश्चर्यां, मुक्तिमार्गः प्रसाधितः ।।

भावार्थ—आप ज्ञान-ध्यान से युक्त होते हुए साधना में अतिशय दृढ हुए तथा आपने अतीव कठोर तपश्चर्या करके मुक्ति-मार्ग की उत्कृष्ट साधना की ।

(७)

यस्य क्रिया प्रभावेण, श्रामण्यं सुप्रतिष्ठितम् ।
तत्सौरभभरेणैव, वासितं जन जीवनम् ।।

भावार्थ जिनकी अनुपम क्रिया के प्रभाव से श्रमणत्व-साधुपद की प्रतिष्ठा में वृद्धि हुई। उसकी संयमरूपी भीनी-भीनी सुगन्ध से जन-जन का जीवन सुवासित हुआ।

(८)

स्वायुः पूर्णं समाज्ञाय, श्रीश्रीलालमहात्मने।
युवाचार्यपदं दत्त्वा, गतः स्वर्गं सुखालयम् ॥

भावार्थ—मरणधर्मा शरीर की क्षीणता से अपने आयुष्य की समाप्ति सन्निकट जानकर चतुर्विध संघ की सुव्यवस्था के लिए श्रीश्रीलालजी नामक सुयोग्य शिष्य को युवाचार्य पद प्रदान कर आपने अनुपम सुखालय (स्वर्ग) की ओर प्रयाण किया।

क्रान्ति का स्वर प्रभु महावीर ने गुंजाया कि संसार की रचना ईश्वर नहीं करता और इसे भी उन्होने मिथ्या बताया कि ऐसे ईश्वर की इच्छा के विना संसार का पत्ता भी नहीं हिलता। संसार की रचना को उन्होंने अनादि कर्मप्रकृति पर आधारित बताकर आत्मीय समता की जो नींव रखी उस पर समता का प्रासाद खड़ा करना सहज हो गया।

नानेश वचनामृत]

आचार्य श्रीश्रीलालजी म० सा०

जीवन-रेखा

जन्म-स्थान	—	१९२६, टौंक (राज०)
पिता	—	श्री चुन्नीलालजी बम्ब
माता	—	चांदकुंवर बाई
जन्मतिथि	—	आषाढ कृष्णा द्वादशी
दीक्षा	—	१९४५, बनेड़ा (राज.)
मास-तिथि	—	माघ कृष्णा सप्तमी
युवाचार्य	—	१९५७, रतलाम (म. प्र.)
मासतिथि	—	कार्तिक शुक्ला द्वितीया
आचार्यपद	—	१९५७, रतलाम (म. प्र.)
मासतिथि	—	कार्तिक शुक्ला नवमी
आनन्दधामप्राप्ति	—	१९७७, जैतारण (राज०)
मासतिथि	—	आषाढ शुक्ला द्वितीया

* संक्षिप्त परिचय *

देवेन्द्रों और दानवेन्द्रों के लिए भी जो अजेय है, उस काम (मदन) को जीतने वाले आचार्य श्रीश्रीलालजी म० सा० हुक्मगच्छ के पांचवे पाट पर सुशोभित हुए।

बचपन से ही आपश्री ने प्राकृतिक सुषमा की अनुपम रमणीयता में रमण करते हुए सयम के उन्मुक्त क्षेत्र में विचरण करने की शक्ति प्रादुर्भूत की थी, तथा भौतिक शक्तियों की उपेक्षा करते हुए आध्यात्मिक भाव मे रमण करने लगे। इस अवस्था को देखकर माता-पिता ने सांसारिक बन्धन-शृंखला में बांधने के लिए आपका विवाह कर दिया। यह प्रबल विघ्न भी आपको अपने विचारों से विचलित नही कर सका।

एक बार जब आप मकान के ऊपर वाले कमरे में अध्ययन कर रहे थे, तब आपकी धर्मपत्नी ने आकर कमरे का दरवाजा बन्द करके आपसे वार्तालाप करना चाहा। आपने सोचा-अहो! एकान्त स्थान मे स्त्री का मिलना ब्रह्मचारी व्यक्ति के लिए योग्य नहीं है। आप वहाँ से भागने की कोशिश करने लगे किन्तु दरवाजा बन्द था। अतः आप ब्रह्मचर्य की सुरक्षा के लिए खिड़की से ही नीचे वाली मंजिल पर कूद पड़े। यह थी आपकी दुर्जय साधना!

वैराग्य का वेग तीव्रतर होता गया। जब किसी भी उपाय से दीक्षा ग्रहण करने की आज्ञा प्राप्त न हो सकी तो अन्त में बिना

आज्ञा ही स्वयमेव दीक्षित हो गये। मोह की प्रबलता के कारण पारिवारिक जनों ने पुनः गृहस्थ बनाने का प्रयास किया किन्तु उनका प्रयत्न मिट्टी में से तेल निकालने के समान विफल हुआ। 'सूरदास की कारो कम्बरिया चढ़े न दूजो रंग' इस कहावत को आपने चरितार्थ किया।

आपकी संयम के प्रति अडिगता देखकर परिवार वालों ने आज्ञा दे दी तब विधिवत् आप संयमी बने। तदनन्तर आचार्य श्रीचौथमलजी म० सा० के अन्तेवासी होकर रहने लगे।

आपने संयम का पूर्णतया पालन करते हुए शास्त्रों का गहनतम अध्ययन किया। आचार्यश्री ने परिपूर्ण योग्यता देखकर आपको अपना उत्तराधिकारी नियुक्त किया।

३२ वर्ष तक संयम-जीवन का पालन कर २० वर्ष आचार्य पद पर रहते हुए जनता को अमृतमय वाणी का पान कराया। आपके उपदेश से बड़े बड़े राजा-महाराजा प्रतिबोधित हुए।

उदयपुर में "इन्फ्लुएंजा" रोग से ग्रसित होने के कारण भावी शासन को अक्षुण्ण बनाये रखने के लिए मुनि श्रीजवाहरलालजी म. सा. को युवाचार्य पद प्रदान किया।

जब पूज्यश्री जैतारण पधारे तब शास्त्रप्रवचन करते समय अचानक नेत्रज्योति क्षीण हो गई। मस्तिष्क में भयानक पीड़ा उठी। तब आपने फरमाया कि यह चिह्न अंतिम समय के जान पड़ते हैं, अतः मुझे संथारा करा दो। किन्तु संतों ने परिस्थिति को देखते हुए संथारा नहीं कराया। आषाढ शुक्ला द्वितीया को

इतनी तीव्र वेदना में भी "घोरा मुहुत्ता अबल सरीरं' द्वारा उपदेश दिया तथा सागारी संथारा ग्रहण किया और रात्रि में यावज्जीवन का संथारा लिया।

चतुर्विध संघ से क्षमायाचना की। रात्रि के चतुर्थ प्रहर मे औदारिक शरीर को त्याग कर समाधिपूर्वक महाप्रयाण कर दिया।

जैनशासन रूप गगनाङ्गन से एक जाज्वल्यमान सूर्य अस्त हो गया।

यद् दूरं, यद् दुरा-राध्यं, भाग्यहीनस्य दुष्करम्।
अनायासेन तत् कार्यं नरवरेण प्रसाध्यते ॥

[ज्ञान मुनि]

जो कार्य बहुत ही कठिनता से करने योग्य है, जो दुराध्य है और जिसे भाग्यहीन (पापकर्मयुक्त) नही कर पाता उसी कठिन कार्य को श्रेष्ठ नर अनायास ही सिद्ध कर लेता हैं।

卐 अष्टकम् 卐

(१)

कामशत्रुविजेतुश्च, सर्वाङ्गेण सुशोभितुः।
श्रीश्रीलाल–गणीशस्य टोंक-ग्रामे समुद्भव ॥

भावार्थः—सुरासुरेन्द्रों द्वारा दुर्जय काम-शत्रु को जीतने वाले, सर्वाङ्गों से सुशोभित आचार्य श्रीश्रीलालजी म. सा. का 'टोंक' ग्राम मे जन्म हुआ।

(२)

विरक्त-भावसंपृक्तः, धार्मिकाचरणे रतः।
जले कमलनिर्लिप्तो, वभूव गृहिजीवने ॥

भावार्थ—पूज्यश्री बचपन से ही विरक्ति के भाव में विचरण करते हुए सामायिक, प्रतिक्रमण, स्वाध्याय, ध्यान आदि धार्मिक आचरण मे लीन रहते थे। जिस प्रकार जल में कमल निर्लिप्त रहता है उसी प्रकार आप भी गृहस्थ अवस्था में रहते हुए संसार से पूर्ण विरक्त थे।

(३)

शैशवसमयोद्वाह. जनकाभ्यां च कारितः।
तथापि पूर्णरूपेण, ब्रह्मचर्य सुपालितम् ॥

भावार्थ—पुत्र को विरक्त अवस्था देखकर कहीं यह साधु न बन जाय, इस विचार से माता-पिता ने बचपन में आपका विवाह कर दिया। फिर भी आपने सुन्दर ढंग से दृढता के साथ 'तवेसु वा उत्तम बंभचेर" समस्त तपश्चरणो मे उत्तम ब्रह्मचर्य का पालन किया।

(४)

चुन्नीलाल। पिता यस्य, जननी 'चांद'' नामिका ।
श्रीश्रीलालस्तयोः पुत्रो. द्योतितो विश्व मण्डल ।।

भावार्थ – आपश्री के पिता का नाम चुन्नीलालजी, और माता का नाम चांदकवर बाई था । उनके पुत्र पूज्य श्रीश्रीलालजी विश्व में देदीप्यमान हुए ।

(५)

स्वेनैव दीक्षितो भूत्वा, शास्त्रस्याध्ययन कृतम् ।
नगरे-नगरे भ्रान्त्वा जैनधर्मः प्रसारित ।।

भावार्थ आप माता-पिता के द्वारा आज्ञा प्राप्त न होने पर प्रथम स्वयमेव दीक्षित हुए तथा आगमों का गहन अध्ययन किया और देश देश में नगर-नगर में भ्रमण कर जैनधर्म का प्रचार-प्रसार किया ।

(६)

आचार्यपदवीं प्राप्य, शिष्याणां सुष्ठु शिक्षणे ।
नक्तंदिवा च शास्त्राणां, स्वाध्याय-करणे रतः ।।

भावार्थ—अपने तप सयम एव प्रतिभा के बल से आचार्य पद प्राप्त कर आचार्यश्री शिष्यों को सुशिक्षित करने मे और निरन्तर स्वाध्याय में अनुरक्त रहे ।

(७)

एषां सदुपदेशेन, बहुभिः भव्यप्राणिभिः ।
सप्त कुव्यसनं त्यक्त्वा, जैनधर्मश्च पालितः ।।

भावार्थ:—आपश्री के उपदेशामृत से बहुत से भव्य आत्माओं ने सप्त-कुव्यसनों का त्याग कर जैनधर्म स्वीकार किया।

(८)

स्वायुः पूर्णं समाज्ञाय, योग्यं ज्ञात्वा जवाहरम्।
आचार्यपदवीं दत्त्वा प्राप्तः चिरशिवालयम्॥

भावार्थ:—अन्त में अपनी आयु की पूर्णता को जानकर प्रकृष्ट प्रतिभा-सम्पन्न, सुयोग्य मुनि-पुंगव जवाहरलालजी महाराज को अपना उत्तराधिकारी आचार्य बनाकर आपने आनन्दधाम प्राप्त किया।

चेतन और जड इन दो तत्त्वों के मिलन का नाम संसार है।
आत्मा का स्वरूप ज्ञानमय चेतन माना गया है, जो चेतना
अनादि से जड़ शरीर के साथ संयुक्त है वही इस
चराचर जगत की रचना का मूल बनती है
और जब साकार से निराकार आत्मा
का स्वरूप प्रकट होता है तब उसे
मोक्ष प्राप्त हो जाता है।

[नानेश वचनामृत]

आचार्य श्रीजवाहरलालजी म० सा०

जीवन-रेखा

जन्मस्थान	—	१९३२, थांदला (म० प्र०)
मास-तिथि	—	कार्तिक शुक्ला चौथ
पिता	—	श्रीजीवराजजी कवाड
माता	—	नाथी बाई
दीक्षा	—	१९४७, लिमड़ी (म० प्र०)
मास-तिथि	—	माघ, शुक्ला द्वितीया
युवाचार्यपद	—	१९७६, रतलाम (म० प्र०)
मास-तिथि	—	चैत्र कृष्णा नवमी
आचार्यपद	—	१९७७, जैतारण (राज०)
मास-तिथि	—	आषाढ शुक्ला तृतीया
आनन्दधामगमन	—	२०००, भीनासर (राज०)
मास तिथि	—	आषाढ शुक्ला अष्टमी

卐 संक्षिप्त परिचय 卐

विन्ध्याचल की पर्वतीय श्रेणियो से आच्छादित मालव प्रान्त की पुण्यधरा-थांदला ग्राम से हुक्मगच्छ के षष्ठ पट्टधर ज्योतिर्धर महान् क्रान्तिकारी जवाहराचार्य का उद्भव हुआ।

इतिहास साक्षी है कि महापुरुषो के जीवनकाल मे अनेक प्रकार की बाधाएं व कठिनाइयां आती है। किन्तु वे पर्वत की भांति अचल धैर्य के साथ उन्हे जीत लेते हैं। वे बाधाएं और कठिनाइयां उनके जीवन को विकास के उच्चतर शिखर पर प्रतिष्ठित करने मे सोपानो का काम करती हैं।

श्री जवाहरलालजी का जीवन बचपन से लेकर वृद्धावस्था तक अनेक प्रकार के संघर्षों एव बाधाओं के बीच से गुजरा किन्तु ज्योतिर्धर जवाहर इन संघर्ष को दुर्लंघ्य घाटियों को दृढतापूर्वक पार करते चले गये। ज्यो-ज्यों संघर्ष आए त्यों-त्यों आपके जीवन मे अधिकाधिक निखार आता गया।

आपश्री की प्रवचन-पटुता, प्रखर प्रतिभा, आगम-मर्मज्ञता और गौरवशाली शरीर सम्पत्ति को देखकर पूज्यश्री श्रीलालजी म० सा० ने आपको विधिवत् अपना उत्तराधिकारी घोषित किया।

प्रखर प्रतिभा से ही आपश्री ने आगमों के गभीर रहस्यों का आलोडन-विलोडन करके जनता मे फैली भ्रान्त धारणाओं का निराकरण कर दया-दान रूप सत्य-तथ्य धर्म के स्वरूप को उद्भासित किया।

सन्त मुनिराजों के ज्ञान-चक्षु को विकसित करने के लिये अपने शिष्यों को पंडितों से अध्ययन कराकर ज्ञानवर्द्धन की दिशा में एक नवीन आयाम स्थापित किया, जिसका तत्काल तो कुछ विरोध सामने आया किन्तु आचार्य श्रीजवाहर की दूरदर्शिता के कारण वर्तमान में उसका व्यापक प्रचार-प्रसार होने से पूरा स्थानकवासी समाज उससे लाभान्वित हुआ, फलस्वरूप श्रमण-श्रमणी वर्ग में संस्कृत-प्राकृत, न्याय, व्याकरण, आगम आदि के धुरंधर विद्वान् सामने आए।

हालाँकि पूज्यश्री एक सम्प्रदाय के आचार्य थे तथापि अखिल जैन-समाज में ही नहीं, अपितु जैनेतर समाज में भी, साथ ही राष्ट्रीय स्तर पर भी आपके व्यक्तित्व का एक अनूठा प्रभाव था।

आपश्री के आगमिक सिद्धान्तो से युक्त प्रवचन सर्वजनहिताय और सर्वजनसुखाय तो थे ही साथ ही साथ भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति मे एक नवीन दिशा-निर्देश देने वाले भी थे।

वह युग भारत की परतन्त्रता का था और आप स्वतन्त्रता के सजग प्रहरी थे। तब भला आपको भारतीय परतन्त्रता की दयनीय स्थिति कब सहन होती ? आपश्री ने भी संजीवनी स्वतन्त्रता पाने के लिये अपनी श्रमणमर्यादा का निराबाध-निर्वहन करते हुए एक विशाल पैमाने पर धार्मिक आन्दोलन प्रारम्भ कर दिया। बाह्य तेज से दमकते-चमकते आपश्री के मुख-मण्डल से स्फुरित वचन स्वतन्त्रता पाने के लिये जन जन में भव्य क्रान्ति का शंखनाद करने लगे।

आपके प्रवचनों का आश्चर्यजनक प्रभाव हुआ। सहस्रों मानवों ने पंचेन्द्रिय जीवों की हिंसा के निमित्तभूत चर्बीमय विदेशी

भीनासर मे व्यतीत किया था। उस समय कर्म रिपु ने अपना पुर-जोर प्रभाव बताया। घुटने मे दर्द, पक्षाघात, जहरी फोड़ा आदि अनेकानेक भयकर बीमारियो ने आ घेरा, किन्तु उस वीर पुरुष के समक्ष उन कर्म-रिपुओ को भी परास्त होना पड़ा। वे आध्यात्मिक पुरुष, आत्मा और शरीर के भेद को जानने वाले, ज्ञान-क्रिया से सयुक्त, अहर्निश साधना मे प्रगतिशील थे। उन वेदनाओ को भी अत्यन्त समभाव से सहन करते हुए कर्म-शत्रुओ से बराबर युद्ध करते रहे।

भयकर वेदना में भी पूज्यश्री के चमकते-दमकते गौर मुख-मण्डल की दिव्य सुषमा से जनमानस मुग्ध हो उठता था। अनायास लोगों के मुख से निकल पड़ता–अहो ! क्या साधना है इस युग-पुरुष की ! कैसी वीरता है कर्म-शत्रुओं को परास्त करने मे इस लोह-पुरुष की !

समुद्रेषु स्वयंभूश्च, दृश्यते मेरुरद्रिषु ।
निर्जरेषु यथा शक्रः तथा श्रीमज्जवाहरः ।।

[ज्ञान मुनि]

जिस प्रकार समुद्रो मे स्वयभू रमण समुद्र विशाल है। पर्वतो मे मेरु पर्वत श्रेष्ठ है। देवताओ में इन्द्र श्रेष्ठ होता है इसी प्रकार साधु-समुदाय मे आचार्य श्री जवाहर है।

भीनासर में व्यतीत किया था। उस समय कर्म रिपु ने अपना पुर-जोर प्रभाव बताया। घुटने में दर्द, पक्षाघात, जहरी फोड़ा आदि अनेकानेक भयंकर बीमारियों ने आ घेरा, किन्तु उस वीर पुरुष के समक्ष उन कर्म-रिपुओं को भी परास्त होना पड़ा। वे आध्यात्मिक पुरुष, आत्मा और शरीर के भेद को जानने वाले, ज्ञान-क्रिया से संयुक्त, अहर्निश साधना में प्रगतिशील थे। उन वेदनाओं को भी अत्यन्त समभाव से सहन करते हुए कर्म-शत्रुओं से बराबर युद्ध करते रहे।

भयंकर वेदना में भी पूज्यश्री के चमकते-दमकते गौर मुख-मण्डल की दिव्य सुषमा से जनमानस मुग्ध हो उठता था। अनायास लोगों के मुख से निकल पड़ता-अहो! क्या साधना है इस युग-पुरुष की! कैसी वीरता है कर्म-शत्रुओं को परास्त करने में इस लौह-पुरुष की!

समुद्रेषु स्वयंभूश्च, दृश्यते मेरुरद्रिषु।
निर्जरेषु यथा शक्रः तथा श्रीमज्जवाहरः॥

[ज्ञान मुनि]

जिस प्रकार समुद्रों में स्वयंभू रमण समुद्र विशाल है। पर्वतों में मेरु पर्वत श्रेष्ठ है। देवताओं में इन्द्र श्रेष्ठ होता है उसी प्रकार साधु-समुदाय में आचार्य श्री जवाहर है।

भीनासर मे व्यतीत किया था। उस समय कर्म रिपु ने अपना पुर-जोर प्रभाव बताया। घुटने मे दर्द, पक्षाघात, जहरी फोड़ा आदि अनेकानेक भयकर बीमारियों ने आ घेरा, किन्तु उस वीर पुरुष के समक्ष उन कर्म-रिपुओ को भी परास्त होना पड़ा। वे आध्यात्मिक पुरुष, आत्मा और शरीर के भेद को जानने वाले, ज्ञान-क्रिया से सयुक्त, अहर्निश साधना में प्रगतिशील थे। उन वेदनाओ को भी अत्यन्त समभाव से सहन करते हुए कर्म-शत्रुओ से बराबर युद्ध करते रहे।

भयकर वेदना मे भी पूज्यश्री के चमकते-दमकते गौर मुख-मण्डल की दिव्य सुषमा से जनमानस मुग्ध हो उठता था। अनायास लोगों के मुख से निकल पड़ता—अहो ! क्या साधना है इस युग-पुरुष की ! कैसी वीरता है कर्म-शत्रुओं को परास्त करने मे इस लोह-पुरुष की !

समुद्रेषु स्वयंभूश्च, दृश्यते मेरुरद्रिषु ।
निर्जरेषु यथा शक्रः तथा श्रीमज्जवाहरः ।।

[ज्ञान मुनि]

जिस प्रकार समुद्रों मे स्वयभू रमण समुद्र विशाल है। पर्वतों मे मेरु पर्वत श्रेष्ठ है। देवताओ मे इन्द्र श्रेष्ठ होता है उसी प्रकार साधु-समुदाय में आचार्य श्री जवाहर है।

भीनासर मे व्यतीत किया था। उस समय कर्म रिपु ने अपना पुर-जोर प्रभाव बताया। घुटने में दर्द, पक्षाघात, जहरी फोड़ा आदि अनेकानेक भयकर बीमारियो ने आ घेरा, किन्तु उस वीर पुरुष के समक्ष उन कर्म-रिपुओ को भी परास्त होना पड़ा। वे आध्यात्मिक पुरुष, आत्मा और शरीर के भेद को जानने वाले, ज्ञान-क्रिया से सयुक्त, अहर्निश साधना मे प्रगतिशील थे। उन वेदनाओ को भी अत्यन्त समभाव से सहन करते हुए कर्म-शत्रुओ से बराबर युद्ध करते रहे।

भयकर वेदना मे भी पूज्यश्री के चमकते-दमकते गौर मुख-मण्डल की दिव्य सुषमा से जनमानस मुग्ध हो उठता था। अनायास लोगो के मुख से निकल पड़ता—अहो ! क्या साधना है इस युग-पुरुष की ! कैसी वीरता है कर्म-शत्रुओं को परास्त करने मे इस लोह-पुरुष की !

समुद्रेषु स्वयंभूश्च, दृश्यते मेरुरद्रिषु ।
निर्जरेषु यथा शक्रः तथा श्रीमज्जवाहरः ।।

[ज्ञान मुनि]

जिस प्रकार समुद्रों मे स्वयभू रमण समुद्र विशाल है। पर्वतो मे मेरु पर्वत श्रेष्ठ है। देवताओ मे इन्द्र श्रेष्ठ होता है उसी प्रकार साधु-समुदाय मे आचार्य श्री जवाहर है।

❋ अष्टकम् ❋

(१)

कषाय-ग्रस्त संसारं, दृष्ट्वा चेतश्च नो रतम् ।
आत्मावबोध-लब्ध्यर्थ 'मगन' शरणं गतः ॥

भावार्थ—ससार को कषायो से ग्रस्त देखकर उनका मन ससार में रत नही हुआ । तब आत्म-ज्ञान की प्राप्ति के लिये आप श्री मगनमुनिजी की शरण को प्राप्त हुए ।

(२)

सार्धमासे गुरावेव, दुर्भाग्येण दिवंगते ।
आगममर्म-बोधार्थं, श्रावकात् पठनं कृतम् ॥

दुर्भाग्य से डेढ़ मास में ही गुरुजी स्वर्गवास को प्राप्त हो गये । तब आगम-ज्ञान पाने हेतु आपने श्रावकों से अध्ययन किया ।

(३)

भित्वा प्रसृतसंघर्षं, समत्वैः पूरितं जगत् ।
महात्मगान्धिना प्रोक्तं, भारते द्वौ जवाहरौ ॥

भावार्थ—ततश्च संसार में प्रसृत संघर्ष को दूर करके समत्व से संसार को पूरित किया । जिससे विश्ववंद्य बापू महात्मा गांधी द्वारा कहा गया-भारत में एक नहीं, दो जवाहर हैं । राजनीति में

पंडित जवाहरलाल नेहरु और धर्मनीति मे आचार्य श्रीजवाहर-लालजी है।

(४)

ज्योतिर्विकसितं यस्य पूज्यस्याधिगतं पदम् ।
अभूवन्नुत्तमाः शिष्याः, रत्नत्रयसमन्विताः ॥

भावार्थ - जिनको ज्ञान-ज्योति का विकास हुआ और आप आचार्य पद पर आसीन हुए। तब उनके रत्नत्रय से युक्त तथा अधिक गुणो से उत्तम शिष्य हुए।

(५)

धर्मभ्रमापनोदाय, मोदायोदारचेतसाम् ।
सद्धर्म मण्डनं कृत्वा चानुकम्पा-कृति कृता ॥

भावार्थ—धर्म सम्बन्धी भ्रम को निवारण करने के लिए तथा उदार अर्थात् दया-दानादि मे उत्साहवान् चित्त वाले जनों के प्रमोद के लिए 'सद्धर्ममण्डन' नामक ग्रन्थ की तथा 'अनुकम्पाविचार' आदि सद्ग्रन्थों की रचना की।

(६)

विद्याविशारदः स्वामी, शास्त्रार्थे विजयी सदा ।
कवीनां विदुषां वैया-करणानां सुधीः प्रधीः ॥

भावार्थ आचार्यप्रवर विद्याओं में विशारद थे तथा शास्त्रार्थ करने में सदा विजयी हुए। कवियों, विद्वानों और वैयाकरणों में श्रेष्ठ थे। कुशाग्र बुद्धि से सम्पन्न थे।

(७)

सुदीर्घकाल-पर्यन्तं, सुशीलादि-क्रियाकरः ।
भीनासर-यशोभूमौ, प्राप्तस्त्रिदशालयम् ॥

भावार्थ दीर्घकाल पर्यन्त संयम ब्रह्मचर्यादि क्रियाओं का पूर्णरूपेण पालन करते हुए बीकानेर के उपनगर यशोभूमि भीनासर में आप स्वर्गलोक को प्राप्त हुए।

(८)

देहाज्जवाहरो नास्ति यशसा तु सनातनः ।
ज्ञानेन्द्रमुनिना तस्य गुणानां कीर्त्तनं कृतम् ॥

भावार्थ—यद्यपि वर्तमान में शरीर से पूज्य श्रीजवाहरलालजी विद्यमान नहीं हैं किन्तु अपने यशः-शरीर से वे सदा-सर्वदा विद्यमान रहेंगे। उन महापुरुष का गुणकीर्तन ज्ञान मुनि द्वारा किया गया।

मानवजीवन में ही नहीं, प्रत्येक छोटे मोटे जीवन में भी यथाविकास निर्णयशक्ति समाई रहती है। जितनी आत्मानुभूति उतनी निर्णायकशक्ति, जितनी आत्मजागृति उतनी इस शक्ति में अभिवृद्धि विकास होता रहता है।

—गानेशवचनामृत

७

आचार्य श्रीगणेशीलालजी म० सा०

जीवन-रेखा

जन्म-स्थान	—	उदयपुर (राज०)
संवत्	—	१९४७
मास-तिथि	—	श्रावण कृष्णा ३ (तीज)
पिता	—	श्री साहिबलालजी मारू
माता	—	श्रीमती इन्द्राबाई
दीक्षा	—	उदयपुर (राज.)
सवत्	—	१९६२
मास-तिथि	—	मार्गशीर्ष कृष्णा एकम
युवाचार्य पद	—	जावद (म. प्र.)
सवत्	—	१९९०
मास-तिथि	—	फाल्गुन शुक्ला ३
आचार्यपद	—	भीनासर (राज०)
मास-तिथि	—	आषाढ शुक्ला अष्टमी
संवत्	—	२०००
आनन्दधामप्रयाण	—	२०१९, उदयपुर (राज०)
मास-तिथि	—	माघ कृष्णा द्वितीया

卐

(७)

सुदीर्घकाल-पर्यन्तं, सुशीलादि-क्रियाकरः ।
भीनासर-यशोभूमौ, प्राप्तस्त्रिदशालयम् ॥

भावार्थ दोर्घकाल पयन्त सयम ब्रह्मचर्यादि क्रियाओं का पूर्णरूपेण पालन करते हुए बीकानेर के उपनगर यशोभूमि भीनासर में आप स्वर्गलोक को प्राप्त हुए।

(८)

देहाज्जवाहरो नास्ति यशसा तु सनातनः ।
ज्ञानेन्द्रमुनिना तस्य गुणानां कीर्त्तन कृतम् ॥

भावार्थ–यद्यपि वर्तमान मे शरीर से पूज्य श्रीजवाहरलालजी विद्यमान नही हैं किन्तु अपने यशः-शरीर से वे सदा-सर्वदा विद्यमान रहेंगे। उन महापुरुष का गुणकोर्तन ज्ञान मुनि द्वारा किया गया।

मानवजीवन में ही नहीं, प्रत्येक छोटे मोटे जीवन में भी यथाविकास निर्णयशक्ति समाई रहती है। जितनी आत्मानुभूति उतनी निर्णायकशक्ति, जितनी आत्मजागृति उतनी इस शक्ति मे अभिवृद्धि विकास होता रहता है।

—नानेशवचनामृत

आचार्य श्रीगणेशीलालजी म० सा०

जीवन-रेखा

जन्म-स्थान	—	उदयपुर (राज०)
संवत्	—	१६४७
मास-तिथि	—	श्रावण कृष्णा ३ (तीज)
पिता	—	श्री साहिबलालजी मारू
माता	—	श्रीमती इन्द्राबाई
दीक्षा	—	उदयपुर (राज.)
सवत्	—	१६६२
मास-तिथि	—	मार्गशीर्ष कृष्णा एकम
युवाचार्य पद	—	जावद (म. प्र.)
सवत्	—	१६६०
मास-तिथि	—	फाल्गुन शुक्ला ३
आचार्यपद	—	भीनासर (राज०)
मास-तिथि	—	आषाढ शुक्ला अष्टमी
संवत्	—	२०००
आनन्दधामप्रयाण	—	२०१६, उदयपुर (राज०)
मास-तिथि	—	माघ कृष्णा द्वितीया

卐

(संप्रदाय) का भविष्य में उत्तराधिकारी (युवाचार्य) नियुक्त किया था।

२. गणयोः+ईशः — गणेशः।

जो दो गणों का ईश हो, वह गणेश है।

महान् क्रियावान् परम प्रतापी पूज्य श्रीहुक्मीचन्दजी महाराज की संप्रदाय के पंचम पट्टधर पूज्य श्रीश्रीलालजी म० के समय से कतिपय कारणों को लेकर सम्प्रदाय के दो विभाग हो चुके थे। उनका पुन. एकीकरण करने के लिये स्थानकवासी समाज के गणमान्य मध्यस्थ मुनिवरों को पंच के रूप मे नियुक्त किया गया था। उन्होंने संवत् १९९० की वैशाख कृष्णा अष्टमी को अपना निर्णय दिया कि पूज्य श्रीजवाहरलालजी म० के एवं पूज्य श्रीमुन्नालालजी म० सा० के गणो के भविष्य मे उत्तराधिकारी पूज्य श्री गणेशीलालजी म० होगे। उनके शब्द है—"मुनि श्रीगणेशीलालजी म० को युवाचार्य नियुक्त करे।" इस निर्णय मे दोनो पक्षो ने अपनी सम्मति दे दी। इस प्रकार पूज्य श्री को दो गणों का युवाचार्य पद प्राप्त होने से "गणयोः+ईशः' की व्युत्पत्ति आपके जीवन में सार्थक होती है।

३. गणानां+ईशः — गणेशः।

दो से अधिक गणों के जो ईश हों, वे गणेश हैं। सं० २००९ की वैशाख शुक्ला १३ बुधवार को लगभग ३५ हजार के विशाल जनसमूह के बीच मे प्रायः स्थानकवासी समाज के मूर्धन्य णसमूह के साथ समग्र चतुर्विध संघ ने एकमत होकर आपश्री को अपना (सर्वसत्ता-सपन्न) उपाचार्य स्वीकृत किया और इस पद की विधि सुसम्पन्न की। इस प्रकार अनेको

गणों के आचार्य बन जाने से 'गणानाँ+ईशः' की व्युत्पत्ति आपश्री के जीवन में घटित होती है।

कुछ-एक कारणों से * श्रमण संघ अपने मूलस्वरूप में स्थायी नहीं रह सका। तब आपश्री ने अपनी शर्त के अनुसार त्याग-पत्र दे दिया और अपनी पूर्व अवस्था में विचरण करने लगे।

जीवन की संध्या में आपश्री के मन में एक विचार स्फुरित हुआ। वह यह था—श्रमणसंघ का जो उद्देश्य है उस उद्देश्य को मैं कम से कम उस उद्देश्य के पोषक संघ में तो पूर्णतया अमली रूप दे दूं। तदनुसार आपश्री ने साधु-साध्वियों में उस उद्देश्य को साकार रूप दे दिया।

जिसके फलस्वरूप वर्तमान मे आपश्री का सघ समताविभूति विद्वत्–शिरोमणि आचार्य श्रीनानेश के योग्यतम अनुशासन को पाकर निराबाधरूप से चलता हुआ सर्वतोभावेन विकास की ओर प्रगतिशील है।

आपश्री की निर्भयता भी मन को विस्मयाभिभूत करने वाली थी। जब आपश्री विचरण-काल में एक बार सतपुड़ा पर्वत पार कर रहे थे, उस समय आपके साथ श्रीमलजी म० तथा जेठमलजी म० थे। अचानक आपकी दृष्टि दो खूंखार शेरों पर

---

* उन कारणों का विशद वर्णन श्री अ० भा० सा० जैन संघ द्वारा प्रकाशित "श्रमण संघीय समस्याओं पर विश्लेषणात्मक निवेदन" नामक पुस्तक में जिज्ञासु देखें।

पड़ी। चालीस-पचास कदम का ही फासला था किन्तु आप बिलकुल निर्भय रहे। कहीं सत डर न जाएँ, अतः आपश्री ने उन्हें अपनी ओट में रखते हुए-वनराजों की तरफ इंगित किया। कितना सौजन्य था अपने गुरुभ्राताओं के प्रति !

— पूज्यश्री से वनराजों का दृष्टिमिलन हुआ। किन्तु जो जगत् का राजा है, संसार के चराचर, प्राणियों को अभय देने वाला है, उसके सामने दो शेर तो क्या सहस्त्रों भी आजाएँ तथापि उसका कुछ भी नहीं बिगाड़ सकते। वनराजों की शक्ति आपश्री के सामने हतप्रभ हो गई। जगत्सम्राट आचार्यश्री गणेश के चरणों में दूरतः श्रद्धान्वित होते हुए दोनो वनराज जंगल में विलीन हो गए।

यह थी आपश्री के जीवन की अद्‌भुत शक्ति, असाधारण निर्भयता ! ऐसी एक नहीं अनेकों घटनाएं आपश्री के जीवन में उपस्थित हुई थीं। महापुरुषों का जीवन आश्चर्यजनक घटनाओं से युक्त होता ही है।

जब आपकी दिव्य आत्मा चरम लक्ष्य की साधना में तन्मय थी तब आपश्री का तेजपूर्ण अलौकिक आभा-मण्डल जनता में एक विचित्र प्रकार की शान्ति प्रसारित कर रहा था।

धन्य है ऐसी महान् पवित्र आत्मा !

प्रत्येक विकासकामी मानव का पहला कर्त्तव्य यह होना चाहिए कि वह अपने प्रत्येक चरण पर सदसत् का एव उसके फलाफल का विवेक सतत रूप से जागृत रखे।

[नानेश वचनामृत]

卐 अष्टकम् 卐

(१)

अज्ञानकर्दमे मग्नः, जीवः संसार-सागरे ।
वैषम्येण समायुक्तः, प्राप्तुमर्हति नो सुखम् ।।

भावार्थ—संसार रूपी समुद्र के अन्दर अज्ञान रूपी कीचड़ में मग्न तथा विषमता से युक्त जीव कभी भी सुख शान्ति को प्राप्त नही कर सकता ।

(२)

इत्थं मनसि संचिन्त्य, प्राप्तः वैराग्य-भावनाम् ।
जवाहरगुरोः पार्श्वे, दीक्षितोऽध्ययने रतः ।।

भावार्थ—इस प्रकार मन में विचार कर आप वैराग्य-अवस्था को प्राप्त हुए तथा श्रीजवाहराचार्य के समीप दीक्षित होकर आगम-पठन में रत हुए ।

(३)

साङ्गोपाङ्गसुशास्त्राणां. मर्मोद्घाटनं कृतम् ।
शास्त्रे विचक्षणो भूत्वा, जनकल्याणमाचरत् ।।

भावार्थ—आपने शास्त्रों के अंग और उपांगों के रहस्य का समुद्घाटन किया और उनमें पूर्ण विचक्षण होकर मनुष्यों का कल्याण किया ।

(४)

ग्रामे ग्रामे भ्रमित्वा च, पापाज्जीवा हि रक्षिताः ।
रागद्वेषमपाकर्तुं, वीरवाणी प्रसारिता ।।

भावार्थ—ग्राम ग्राम में परिभ्रमण कर पापो से जीवों की रक्षा की तथा राग-द्वेष को दूर करने के लिये भगवान् महावीर की वाणी का प्रचार किया।

(५)

सर्व-श्रमणसंघस्य, युवाचार्यपद गतः।
तत्राचारस्य शैथिल्य, दृष्ट्वा निजपदं जहौ ।।

भावार्थ—स्थानकवासी समाज के उपाचार्य पद को प्राप्त किया, किन्तु वहां आचार की शिथिलता देख अपने पद को छोड़ दिया।

(६)

शरीरे चैकदा तस्य, महाव्याधिसमुद्भवे।
क्षमया सहनं कृत्वा, व्यग्रता नैव दर्शिता ।।

भावार्थ—एकदा आपके शरीर में महान् व्याधि उत्पन्न होने पर उसे क्षमा पूर्वक सहन किया पर आपने किंचित् मात्र भी व्यग्रता प्रदर्शित नहीं की।

(७)

धुरं समर्प्य नानेशं ज्ञात्वा स्वमरणान्तकम्।
तत्याजौदारिको, देहो विद्यमानो गुणैः सदा ।

संघ का भार सुयोग्य शिष्य नानेश को देकर के अपने मरणान्त को जानकर पंडितमरण पूर्वक औदारिक शरीर को त्याग किया। तथापि गुणों के द्वारा तो वे आज भी विद्यमान है।

(८)

यत्र तत्र च सर्वत्र, प्रसृत गुणसौरभम् ।
गणेशाचार्यपूज्यस्य, धरायां शाश्वतं ध्रुवम् ।।

भावार्थ—पूज्य गणेशाचार्यजी का गुण-सौरभ अवनितल पर यत्र तत्र सर्वत्र शाश्वत ध्रुवरूप से फैला हुआ है ।

यथा मृत्योर्न कालोस्ति, संयमस्य तथैव हि ।
गृह्यते भावभद्रेण, त्यागवैराग्यसंभ्रमैः ।।

[ज्ञान मुनि]

मृत्यु का कोई नियत समय नहीं, वह कभी भी आ सकती है। इसी प्रकार संयम को भी बालत्व, यौवनत्व, प्रौढत्व में कभी ले सकते हैं। महापुरुष इस स्वरूप को जानकर त्याग-वैराग्य से भावनापूर्वक संयम ग्रहण करते हैं।

आचार्य श्रीनानालालजी म० सा०

जीवन-रेखा

जन्मस्थान — दांता (राजस्थान)

संवत् — १९७७

मास-तिथि — ज्येष्ठ शुक्ला द्वितीया

पिता — श्रीमोड़ीलालजी पोखरणा

माता — श्रृंगार बाई

दीक्षा — कपासन

संवत् — १९९६,

मास-तिथि — पोष. शुक्ला अष्टमी

युवाचार्यपद — उदयपुर (राज०)

संवत् — २०१९

मास-तिथि — आश्विन शुक्ला द्वितीया

आचार्यपद · उदयपुर

संवत् — २०१९

मास-तिथि — माघ कृष्णा द्वितीया

—

卐 संक्षिप्त परिचय 卐

उन्नत ललाट, प्रलम्ब बाहु, प्रदीप्त गात्र, ब्रह्म तेज से चमकता मुखमण्डल, निर्विकार सुलोचन, विशाल वक्षस्थल आदि शारीरिक श्री से समृद्ध, प्रखरप्रतिभा-सम्पन्न महायोगी को देखकर जन-जन के मानस में अपूर्व आन्तरिक शांति का संचार हो जाता है

जिस महायोगी की योग-मुद्रा से निर्झरित शीतल शांति रूप नीर में आप्लावित होकर एक नही अनेकों आत्माओं ने परम शांति का अनुभव किया और कर रहे हैं। वे महायोगी है–आचार्यश्री नानेश।

वीरभूमि मेवाड़ के दांता ग्राम में प्रादुर्भूत होकर कर्मरूपी शत्रुओं का दमन करने के लिये शांत-क्रांति के जन्मदाता गणेशाचार्य के सान्निध्य में दीक्षित–संयमित हुए और अहर्निश साधना की सीढियों पर आरोहण करने लगे।

आगम के गम्भीर रहस्यों–तलस्पर्शी ज्ञान तो प्राप्त किया ही, साथ ही अन्य धर्मों के ग्रंथो का भी अध्ययन किया। न्याय, व्याकरण साहित्य आदि विषयों के अनेक ग्रन्थों के गहन अध्ययन के साथ संस्कृत-प्राकृत भाषाओं पर भी पूर्ण अधिकार प्राप्त किया। ऐसी प्रगतिशील भव्य साधना को देखकर आचार्य प्रवर ने महायोगी को उदयपुर नगर में, राजमहल के विशाल प्राङ्गण में, धवल वस्त्र प्रदान कर अपना उत्तराधिकारी (युवाचार्य) घोषित किया।

इनका साधनामय जीवन जन-जन के मानस को धर्म का दिव्य प्रकाश प्रदान करेगा मानो इस तथ्य की सूचना देने के लिये मेघाच्छादित सूर्य भी धवल-वस्त्र प्रदान करते समय बादलो से अनावृत होकर पूर्णतया जाज्वल्यमान हो उठा। वर्तमान मे भी अनेकों घटाटोप मेघों के पटल भी महायोगी की साधनारूपी सूर्य की प्रचण्डता के समक्ष बिखरते जा रहे है।

आज से लगभग सात वर्ष पूर्व मालव प्रान्त में लाखों दलित वर्ग, जो गोरक्षक से गोभक्षक बन रहे थे, जिनका मानवीय स्तर अध:पतन के गर्त मे गिर रहा था, ऐसे हजारों व्यक्तियों के बीच में पहुंच कर इस महायोगी ने अपना प्रभावशाली उपदेश उन्हें दिया। सप्त कुव्यसनों का परित्याग करवाकर– उनको मानवता की उच्च भूमिका पर ला जीवन की दिशा परिवर्तित की। बलाई आदि नामों से उपेक्षित समाज को 'धर्मपाल' नाम से परिष्कृत किया। तब समाज ने इस महायोगी को "धर्मपाल-प्रतिबोधक" की सार्थक उपाधि से सम्बोधित किया।

प्रवचनशैली इतनी मनमोहक है उस महायोगी की, कि जनता वशीकरण मंत्र की तरह खींची हुई चली आती है। क्योंकि आपका प्रवचन आधुनिक युग के सन्दर्भ मे आगमिक सिद्धान्तों के धरातल पर वैज्ञानिक तरीके से होता है। हजारों युवक उन प्रवचनो से प्रभावित होकर समाज मे फैली हुई दहेज प्रथा आदि कुरूढियों का उन्मूलन करने के लिए कटिबद्ध हुए हैं। लगभग पांच ५ हजार व्यक्तियों ने तो "नोखामण्डी" मे प्रतिज्ञा अंगीकार की थी। इस प्रकार स्थान-स्थान पर अनेकों व्यक्ति प्रतिज्ञाएं धारण करते हैं। महायोगी का "समता-सिद्धान्त"

व्यक्ति से लेकर अन्तरराष्ट्रीय-स्तर तक की विषाक्त विषमता को उन्मूलित करने में समर्थ है। आवश्यकता है उन सिद्धान्तों को अपनाने को।

जयपुर-चातुर्मास के समय एक अध्यापक ने पूछा- "किं जीवनम् ?" समाधान दिया उस महायोगी ने-"सम्यक् निर्णायकं समतामयञ्च यत् तज्जीवनम्" इस एक ही सूत्र पर चातुर्मास पर्यंत अभिनव विवेचन जनता को दिया था जिसका सकलन "पावस प्रवचन" के अनेक भागों में सकलित है। ऐसी है उनकी प्रतिभा।

'विश्व के रग-मच पर प्राय: मानवो की गति भौतिक वस्तुओं के लुभावने दृश्यो की ओर होती है। ऐसे भौतिक वातावरण में भी इस महायोगी की सौम्य मुख-मुद्रा का दर्शन एवं समता के सिद्धान्तों को श्रवण कर उनके सान्निध्य में एक नही अनेकों स्त्री-पुरुष (लगभग १६०) ससार की समस्त मोह माया का परित्याग कर सर्वतोभावेन समर्पित हो चुके है। अर्थात् विषमता से समता की ओर, राग से विराग की ओर, भोग से योग की ओर, सन्मुख होकर भागवती दीक्षा अगीकार कर चुके है।

जिनके सतत सान्निध्य को पाकर चतुर्विध सघ बहुमुखी विकास कर रहा है। शिक्षा-दीक्षा प्रायश्चित्त-चातुर्मास आदि साधु-साध्वी वर्ग के सभी कार्यों में उस महायोगी की आज्ञा ही सर्वोपरि होती है, जिसे साधु-साध्वी वर्ग सहर्ष स्वीकार कर तदनुरूप आचरण में सलग्न है। इसीलिये अल्प समय में ही सघ मे कई श्रमण-श्रमणी वर्ग आगमज्ञ-गवेषक-चिन्तक हो गए

हैं, कई दर्शनशास्त्र के ज्ञाता हैं तो कई संस्कृत-प्राकृत-व्याकरण-साहित्य आदि विषयों पर अपना अधिकार रखते हैं। आपके शिष्यवर्ग भारत के विभिन्न प्रान्तों-मेवाड, मालवा, मारवाड, महाराष्ट्र, गुजरात, आसाम, उड़ीसा आदि में विचरण कर जन-मानस की सुषुप्त चेतना को जागृत करने के लिये आपश्री द्वारा प्रतिपादित समता-सिद्धान्त का शखनाद कर रहे है।

इस महायोगी के साधनामय जीवन मे एक नही, अनेको चामत्कारिक घटनाएं घटित हुई हैं, जिनमे से एक घटना बतलाई जा रही है। जब आपश्री का चातुर्मास "नोखामण्डी" में था तब एक वृद्ध महिला, जिसको कि आँख से दिखलाई नही देता था, वह आपश्री के दर्शन करने को बहुत इच्छुक थी। एक बार जब आप वन-विहार करते हुए स्थानक की ओर पधार रहे थे, तब मध्य में ही उस महिला के पारिवारिक जन द्वारा प्रार्थना करने पर आप वहां पधारे और उस महिला को मांगलिक श्रवण कराया।

उसका तत्काल आश्चर्यजनक प्रभाव हुआ। महिला के नेत्रों में ज्योति आगई! उसे सब वस्तुए स्पष्ट दिखाई देने लगी। डाक्टरो ने भी उसके नेत्रों का अनुसन्धान किया और बताया कि वास्तव मे यह यथार्थ तथ्य है।

महापुरुष चमत्कार करना नहीं चाहते, वह तो उनके साधनामय जीवन से स्वतः ही हो जाता है।

धन्य है ऐसे महायोगी को, इनका सतत सान्निध्य हमे निरन्तर प्राप्त होता रहे, यही मंगलमयी शुभ कामना है।

—❋—

* अष्टकम् *

(१)

मेवाडे प्रथिते प्रान्ते, दांताग्रामे समुद्भवः ।
ममताबन्धनं छित्वा, संयमजीवने रतः ॥

भावार्थः—प्रसिद्ध मेवाड़ प्रान्त के दांता ग्राम में जन्म लेने वाले वर्त्तमान शासनेश (श्रीनानालालजी म० सा०) जागतिक बन्धन को तोडकर संयममय जीवन में निरत हो गए ।

(२)

आगमज्ञाननिष्णातः, गणिपदे सुशोभितः ।
वीरवाणीप्रचारार्थ, ददाति देशनासुधाम् ।

भावार्थः—आप अध्ययन करके आगम के मर्म मे निष्णात हुए तब गणेश गणिवर ने आपको गणिपद पर सुशोभित किया । ततश्च विश्व भर के अन्दर आप देशनासुधा का जनसमुदाय को पान करा रहे है ।

(३)

वैषम्यस्य विनाशार्थं, समतैकमौषधम् ।
तत्सिद्धान्तस्वरूप हि संक्षेपेण निगद्यते ।

भावार्थः—व्यक्ति से लेकर अखिल विश्व तक प्रसृत विषमता का विनाश करने के लिये समता ही एक मात्र औषध है, जिसका

आप प्रसार कर रहे हैं। उन्हीं सिद्धान्तों के स्वरूप को संक्षेप में कहते हैं।

—समतासिद्धान्त-दर्शन—

(४)

गृह्णाति हृदि भावेन, त्याग-वैराग्य-संयमम्।
लभते समसिद्धान्त, जीवनोन्नतिकारकम्॥

भावार्थ:—जो साधक आन्तरिक भावना के साथ जीवनोन्नतिकारक त्याग, वैराग्य, संयम को ग्रहण करता है, वह समतासिद्धान्त को प्राप्त करता है।

—जीवन-दर्शन—

(५)

पलं सुरापणाखेटा:, चौर्यं वेश्यापराङ्गना।
सप्त व्यसनसत्याग:, दर्शनं जीवनस्य तत्॥

भावार्थ—मांस, मदिरा, जुआ, शिकार, चोरी, वेश्यागमन, परस्त्रीगमन, इन सात कुव्यसनों का जो त्याग करता है वह जीवन-दर्शन को प्राप्त करता है।

आत्म-दर्शन—

(६)

पंचमहाव्रतानां च, शुद्धरूपेण जीवने।
कुरुते पालने नित्यं, समाप्नोत्यात्मदर्शनम्॥

भावार्थ—जो जीवन में शुद्ध रूप से पंच महाव्रतों का पालन

करता है वह आत्मदर्शन को प्राप्त करता है।

परमात्म-दर्शन—

(७)

कर्मणां विप्रणाशेन, संप्राप्याऽयोगिजीवनम् ।
विशुद्धं लभते प्राणी, परमेशपदं परम् ॥

भावार्थ—प्राणी अष्ट कर्मों का सम्पूर्ण रूप से विनाश कर देने से अयोगी जीवन को प्राप्त करके विशुद्ध परमात्म पद प्राप्त करता है।

(८)

यावत्सत्त्वं दिनेशस्य, शैलेशस्य कथा तथा ।
नानेशस्य यशः शस्यं, शाश्वतं काश्यपीतले ॥

भावार्थ—जब तक विश्व में सूर्य विद्यमान है तथा सुमेरु पर्वतराज की सत्ता है तब तक मुनिराज नानेश का निर्मल और प्रशस्त यश भूतल पर विद्यमान रहेगा।

अष्टाचार्य-गुणाष्टकम्

छन्दः-शार्दूलविक्रीडितम्

(१) श्राचार्य श्रीहुक्मीचन्दजी म० सा०

शास्त्राणां विधिपूर्वकं मुनिजनाः कुर्वन्ति नो स्वक्रियाम्,
ज्ञात्वा, जीवन-सर्जने परिषह सम्सह्य, शास्त्रे रतः ।
तत्त्वानां मथनेन सर्व-सुखदं बोधं नरेभ्यो ददौ,
ज्ञानेनाचरणेन-योग-निरतो वन्दे हि हुक्मि गुरुम् ॥

हिन्दी काव्यः—

शास्त्रों की विधि-भाव से मुनिजनों को पालना थी वहीं,
आत्मा के सुविकास में परिषहों को साम्यता से सहा ।
शास्त्राभ्यास विमर्श से मधुसुधा सुज्ञान पूरा दिया,
हुक्मी भानु सुबोध आचरण से दीपे धरा में सदा ॥

भावार्थ—मुनिजन शास्त्रों की विधि के अनुसार अपनी क्रियायें नही करते थे । ऐसा जानकर जीवन निर्माण में परिषहो को सहन कर, शास्त्र-पठन में रत हुए और तत्वों के अभ्यास से प्राणियो को सुखद उपदेश फरमाया । इस प्रकार ज्ञान और आचरण से योग मे निरत हुक्मी गुरुवर को नमस्कार करता हूँ ।

(२) आचार्य श्रीशिवलालजी म० सा०

वैषम्येण चराचरं सविपदं दृष्ट्वा मनो नो रतम्,
पापाद् दूरगतः सरागनिलयं हित्वा व्यधान् मुण्डनम् ।
आचार्यश्च गुणान्वितः सुतपसा संसारमोहं जहा-
वंभोजं मकरालये च विमलो वन्दे शिवं कोविदम् ॥

हिन्दी काव्य—

संसार स्थिति का विचार करके आसक्ति से दूर हो,
पापों से सुविरक्त हो विषमता को त्याग के चित्त से ।
हो आचार्य सुधी सुवीर तप से निष्पाप हो भाव से,
ज्यों इंदीवर सिंधु में शिवगणी दीपे सुधी लोक में ॥

भावार्थः—चराचर लोक को विषमता से दुःखी देखकर संसार मे जिनका मन लीन नहीं हुआ । जिन्होने पाप से दूर हो, तप के द्वारा राग समूह का नाश कर मुण्डन किया, तथा आचार्य के गुणो से युक्त 'सु' सम्यक् ज्ञान सहित (३३ वर्ष पर्यन्त एकान्तर की) तपश्चर्या के द्वारा ससार-मोह का नाश किया । इस प्रकार समुद्र मे कमल के समान निर्लिप्त विचक्षण शिवाचार्य को नमस्कार करता हूँ ।

(३) आचार्य श्रीउदयसागरजी म० सा०

दुःखानां शमनादमुं गणिवरं वैराग्यभावैर्युतम्,
भव्यानां हृदयाङ्गणात् शशिसमं मिथ्यात्वविध्वंसकम् ।

शान्तं दान्त–विशुद्ध-भाव–भरितं रत्नत्रयाराधक-
माचार्योदय-सागरं गुणनिधिं वन्दामहे सादरम् ।

हिन्दी काव्य—

दुःखों का कर नाश संयमव्रती वैराग्य संपृक्त थे,
भव्यों के मिथ्यात्व के तिमिर को सद्देशना से हरा ।
जो संशुद्ध-विशुद्ध भाव युत थे, रत्नत्रयाराधक,
आचार्योदयसागराख्य गुरु को है वन्दना प्रेम से ॥

भावार्थः—ये गणिवर दुखों का शमन करने वाले वैराग्य भाव से युक्त हुए, जो रत्नत्रय के आराधक शान्त दान्त और विशुद्ध भाव से युक्त थे, जिन्होने चन्द्रमा के समान होकर भव्यों के हृदयाङ्गन से मिथ्यात्व के अन्धकार का नाश किया। ऐसे गुणों के निधि और मनुष्यों से पूजित आचार्य श्री उदयसागरजी महाराज को वन्दन करते हैं।

(४) आचार्य श्रीचौथमलजी म० सा०

तत्त्वानां परिशीलने प्रतिपलं यत्नेन नित्यं रत,
जीवानां परिरक्षणे भगवतो वाण्याः प्रचारं दधौ ।
गांभीर्येण महार्णवं बहुजनैः पूज्यं च संयामक
तीर्थानां सुत्रिकासकं जन-जनेष्वाचार्यचौथ नुमः ॥

हिन्दी काव्य—

तत्वों के सुविचार से सुयत हो, सोचा सदा बुद्धि से,
तीर्थेश ध्वनि को किया प्रकट यों रक्षा हुई सत्त्व को ।

गंभीराब्धि समान सर्व जन के सयामक श्रेष्ठ थे,
जो थे तीर्थ विकास-कारक महान् श्री चौथ को वन्दना ।।

भावार्थ—जो दमनशील, तत्त्वों के परिशीलन में यत्न से नित्य रत हुए, जिन्होंने जीवों के परिपालन के लिए भगवान् की वाणी का प्रचार किया, जो गंभीरता में महार्णव के तुल्य थे, बहुजनों से पूज्य, सयमी एवं साधु-साध्वी, श्रावक-श्राविका रूप चतुर्विध संघ के सुविकासक थे, उन आचार्य श्रीचौथमलजी म० सा० को नमस्कार करते हैं।

(५) आचार्य श्री श्रीलालजी म० सा०

मोहासक्त-नरा हि भौतिक-सुखैर्दुःखं लभन्ते ध्रुवम्,
तद् दृष्ट्वा परिवार-जन्य-वनिता—सम्बन्धक त्रोटितम् ।
सत्कर्मावरणं सुतीव्रतपसा जीवात् क्षिपन्त सदा,
सत्याचौर्यमहाव्रतैश्च लसितं श्रीलालसूरिं नुमः ।।

हिन्दी-काव्य—

रागों में रत जीव निश्चय सदा पाता महा दुःख को,
ऐसा जान शुभाङ्गना गृहजनों से स्नेह को तोड़ के।
कर्मों के पट को सुतीव्र तप से फेंका सभी जीव से,
सत्याचौर्य-यमादि से चमकते श्रीलालजी को नमें ।।

भावार्थ—मोह से आसक्त मनुष्य निश्चय ही भौतिक सुखों

से दुःख को ही प्राप्त करता है। यह देखकर जानकर परिवार एव पत्नी सम्बन्धी स्नेह के बन्धन को जिन्होने तोड़ दिया तथा कर्म के आवरण को तीव्र तपश्चर्या द्वारा दूर करते हुए अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह रूप महाव्रतों से सुशोभित हुए, उन श्रीश्रीलालजी सूरीश्वर को नमस्कार करते है।

(७) आचार्य श्रीजवाहरलालजी म० सा०

देशेऽस्मिन् धन-धान्य वैभवयुते श्रीथांदलाग्रामके,
माणिक्येषु च हीरकं द्युतियुत ज्योतिर्धरं साधुषु।
शास्त्रस्याध्ययनं मनोवचनकैर्योगेन संपादितम्
तं सर्वार्च्य-जवाहरं यतिवरं भावेन भक्त्या नुमः॥

हिन्दी काव्य—

ग्रामो में शुभ थांदला निगम में प्राणी सभी थे सुखी,
हीरों में द्युतियुक्त हीर चमके ज्योतिर्धर श्रेष्ठ ही।
शास्त्रों का सुविचार देह मन से सम्पन्न था योग से,
भावों से भर के जवाहर गणी को प्रेम से वन्दना।

भावार्थ—इस देश भारतवर्ष में प्रसिद्ध, धन-धान्य से परिपूर्ण थांदला ग्राम में जन्मे, साधुओं में ज्योतिर्धर, माणिक्यों में जो चमकते हुए हीरे के समान थे, जिन्होंने शास्त्रों के अध्ययन को मन वचन काय रूप योग से संपादित किया था, ऐसे सभी के अर्चनीय यतिवर जवाहरगणी को भक्ति-भाव से नमस्कार करते है।

(८) आचार्य श्रीगणेशीलालजी म० सा०

गार्हस्थ्ये च महातमो विलसितं शीर्षे सदा भ्राम्यति,
ज्ञात्वा-वीर जवाहरेण विरतं संपादित जीवनम्,
स्वाध्याये निरतं प्रशस्तमनसा मग्नं समाधौ ध्रुवम्,
भाषा यस्य सुकोमला सुललिता वन्दे गणेशं गुरुम् ॥

हिन्दी काव्य—

जीवों के मन में सदा विकच है अज्ञान का चक्र ही,
रागों से मन को जवाहरगणी से बोध पा छोड़ के।
शास्त्रों में रत हो प्रशस्त मन से पाये समाधि ध्रुव,
भाषा थी जिनकी सुकोमल सुधा वन्दे गणेश प्रभु।

भावार्थ—गृहस्थ जीवन में फैला हुआ अज्ञान रूप घनधिकार मस्तिष्क में सदा घूमता है, ऐसा जानकर जिन्होंने कषाय रूपी शत्रुओं का मर्दन करने मे वीर जवाहराचार्य से बोध पाकर जीवन को विरक्त बनाया, ऐसे प्रशस्त मन से स्वाध्याय में निरत, निश्चित समाधि में लीन, सुन्दर ललित भाषा के प्रयोक्ता श्रीगणेश गणिवर को प्रसन्नता से नमस्कार करता हू।

(९) आचार्य श्रीनानालालजी म० सा०

संसारे सरतां कुधर्ममननेनोन्मत्तमातङ्गवत्,
जीवानां हृदि भावितं मदमपा चक्रे सुरूपेण च।

धर्मस्यापि समस्तजीवनिवहे येन प्रचार: कृत:,
पापानां विनिवारकं तमुदितं नानेशदेवं नुम: ॥

हिन्दी काव्य—

उन्मत्त द्विप के समान नर ही संसार में हैं बहू,
विक्षेपोन्मुख भूरि पाशविकता से दूर पूरा किया।
धर्मों का करके प्रचार जग में सतोष भू को दिया,
पापों का कर नाश निस्पृह गणि नानेश को वन्दना।

भावार्थ—कुधर्म के मनन के कारण उन्मत्त हाथी के समान विचरते हुए जीवों के हृदय में भावित मद को सम्यक्तया दूर किया तथा समस्त प्राणी वर्ग में धर्म का पूर्ण प्रचार किया। इस प्रकार पापों का निवारण करने वाले उदय को प्राप्त नानेश देव को वन्दन करते हैं।

प्रशस्ति-छन्द-स्रग्धरा—

इत्थं भक्त्या गुणानां हृदय कमलके शान्तभावं सुखेन,
संरक्ष्यार्यप्रभाव सकलगुणगणाद्यर्चनं य: करोति।
ज्ञानं श्रद्धा चरित्र त्रिषु मणिनिलयं प्राप्य मुक्ते: सुमार्गं,
निर्बाधं तेन लब्धं भवति सुखमयं साधुज्ञानेन्द्रभाव: ।

हिन्दी काव्य—

ऐसी पूजा गुणों से हृदय कमल में भाव की स्थापना से,
आचार्यों की प्रभा को, सकल सुयश को जो नमें भावना से

ज्ञाम श्रद्धा क्रिया ही शुभ मणित्रय को ज्ञान निर्बाध मुक्ति,
वे ही पाते खुशी से, निरुपम सुख को 'ज्ञान' के भाव ये ही ।

भावार्थ—इस प्रकार जो आचार्यों के गुणों के शाँत भाव एवं प्रभाव को सुख से हृदय-कमल में स्थापित करके सम्पूर्ण गुणगणों की अर्चना (भक्ति) करता है, वही ज्ञान-दर्शन-चारित्र रूप त्रिरत्न को प्राप्त करके निर्बाध मुक्ति-पथ को प्राप्त करता है। यही "साधु ज्ञानेन्द्र" का भाव है।

परं प्रति दुराध्यान. कदाऽपि न करोति यः।
निरन्तरं सुखं प्राप्तुं स एव शक्यते नरः॥

[ज्ञान मुनि]

जो व्यक्ति कभी भी दूसरों का अहित नही चाहता सदा हित चाहता है, वही व्यक्ति शाश्वत शांति पाने मे सक्षम हो सकता है।

श्रीवर्धमानप्रशस्तिः

श्रीवर्धमान स्वामिन् ! चरणौ सदा नमामः ।
तव शासनोन्नतिं च, भक्त्या हृदा चराम ।।

तव शासनं धरायां विजयं सुख लभेत ।
जय-घोषमेव सर्वे मनुजा वय वदामः ।
श्रीवर्धमान······

निर्ग्रन्थ·धर्मग्रहणे भव्याश्च मुक्तिमाप्ताः ।
तस्याश्रयेण मुक्ति वयमत्र सभाजामः ।।
श्रीवर्धमान ···

तव शासनस्य दीप्तेः करणाय सत्प्रयासः ।
नाना गुरु-गरीयान्, जयते च तं श्रयामः ।।
श्रीवर्धमान ···

अपश्चिम-जिनगुण:

हे वीर देव भगवन् ! सततं दया विधेया ।
गातुं गुणान् प्रवृत्ता:, रक्षा सदा निधेया ।।

सिद्धार्थ-राज–त्रिशला, पित्रोः सुभाग्यज्ञातः ।
शकेन्द्र-पूजितस्य, विमला गुणाश्च गेया: ।।
हे वीर देव ....

कुण्डन पुरे नवीन:, सूर्योदयो बभूव ।
कीर्णं प्रकाशज्योतिः भक्तिः सदैव नेया ।।
हे वीर देव ...

तस्यैव शासनेस्मिन् नानेशपूज्यदेवः ।
संराजते गुणौधैः, वाचां सुधैव पेया ।।
हे वीर देव........

नानेश-गुणगरिमा

नानेश देव गणिवर, सेवाँ मुदा चराम. ।
जीवनविकासनाय भक्त्य सदा नमामः ॥

मेवाड़प्रान्तकस्य दांता सुग्राम-भागे ।
जन्मोत्सवो बभूब गुणकीर्त्तनं स्मरामः ॥
नानेश देव ...

शैशव-समयसमाप्तौ दीक्षा मुनेः गृहोता ।
नष्टं च कर्मजालं, पादौ गुरोः श्रयामः ॥
नानेश देव... ...

गुरुवर-गणेशकृपया जातो गणीशप्रवरः ।
समताप्रणेतुरेवं युगपादयोः वसामः ॥
नानेश देव .. ..

श्री नानेशाचार्याय नमः

भज नानेश, भज नानेशं,
नानेशं भज दीनदयालुं ।
परमकृपालुं परमदयालुं,
परमं पूज्यं जग-दुपकारं ॥
भज नानेशं··· ·· · ···

समता धारं ज्ञानागारम्,
जन-हित कारं भव भय-हारं ।
भज नानेशं ··· ····

कल्प-विहारं, समतागारं,
धृतिसुखधारं सुधावतारं ।
भज नानेशं ······ ··

सत्य विचारं जगत्सुपारं,
दुरित-विदारं संयम-धारं ।
भज नानेशं · ··· ···

✱ श्री-इन्द्रसेवाकीर्तिपञ्चकम् ✱

बोध प्राप्य गणेश-पूज्यवरकाल्लनः सुवीराध्वनि,
सर्वेषां परिपालने मुनिवरो साम्येन नित्यं रतः।
सेवायां निरतो प्रशस्तमनसा पापं विनष्टं कृतम्
वात्सल्येन युतं सुसाधुनिवहे श्रीन्द्र मुनीशं नुमः ॥

भावार्थ–शान्त क्रान्ति के प्रदाता आचार्य श्री गणेशीलालजी म० के द्वारा बोध को प्राप्त करके, भगवान् महावीर के पथ पर अग्रसर हुए तथा सभी के परिपालन में मुनिपुंगव समत्व भाव से नित्य निरत हुए, पापों का नाश किया। साधु समुदाय पर वात्सल्य भाव से परिपूर्ण श्री इन्द्र मुनीश को नमस्कार करते हैं।

सेवाभावयुतस्य शुद्धगुरुताम् शक्राच्च बुद्ध्वामरः,
यो मिथ्यात्वमहातमो विलसितो दातुं च कष्टं महत्।
नदोषेणसमक्षमेव विबुधः साधुश्च भूत्वागत,
शुश्रूषां च चकार साम्यमनसाऽग्लानेन भावेन सः ॥

भावार्थ—सेवाभाव से युक्त मुनिवर (नन्दिषेण) की शुभ्र महिमा देवसभा में इन्द्र के द्वारा देवों ने श्रवण की। उनमें से एक देव, जिसकी मति मिथ्यात्व-तम से विलसित थी वह, नन्दिषेण अनगार के समक्ष उनकी कष्टसाध्य परीक्षा लेने के लिये

साधु वेश मे उपस्थित हुआ। नदिषेण अनगार ने बडी ही प्रसन्नता एव साम्यभाव के साथ (साधु वेशधारी देव) की सेवा की।

साधो तस्य महाबलीशहृदये कष्टेऽपि धैर्यं महत्,
ज्ञात्वा निर्मलभावकं शुचितर देवोऽपि भक्त्या नतः।
वीरेणाऽपि निजागमे च कथित सेवामहत्त्वं मुदा,
वैयावृत्यफलं हि देवमहितं तीर्थंकरत्वं वरम्॥

भावार्थ – इस प्रकार महाबलीश साधु को कष्ट पड़ने पर भी हृदय में धैर्य तथा निर्मल शुचितर भाव को जानकर देव भी भक्ति से नत हो गया। चरम तीर्थंकर भगवान् महावीर के द्वारा भी आगमों में सेवा का महत्व कहा क्या है। सेवा से आत्मा श्रेष्ठ तीर्थंकर प्रकृति को प्राप्त करके मुक्त अवस्था को प्राप्त कर सकता है।

पूज्येन्द्रोऽपि जिनेश्वरस्य वचन सस्थाप्य हृत्पिण्डके,
सेवाया सततं रतः प्रजिदिन शुद्धेन भावेन हि।
बालानां च यथा करोति जननी-प्रीत्या सदा पालनं,
स्ववृत्या च तथैव शोभितमहो श्रीन्द्रं यतीशं नुमः॥

पूजनीय इन्द्र मुनिवर जिनेश्वर के वचन को हृदय मे स्थापित करके, प्रतिदिन शुद्ध भाव से सेवाचरण में रत हुए। जिस प्रकार माता प्रेम पूर्वक बच्चों का लालन-पालन करती है वैसे ही आप संत मुनिवरों के शुद्ध सयम की प्रगति में स्नेहसिक्त हो सेवा प्रदान करते हे। एतदर्थ यतीश श्री इन्द्र को नमस्कार करते है।

धात्रयीसुपदे सुगौरवमये देवो मुनीन्द्रः सदा,
संसारेण विरक्तजीवनिवहे, ज्ञानस्य रत्नं ददौ ।
नानेशस्य गणस्य चिन्तकपद प्राप्तः सुमंत्रित्वकं,
श्रीन्द्रोः वीरचयैः गुणैर्युगयुगे भासेत भावो ममः ॥

भावार्थ—धाय माता के गौरवमय पद पर श्रीइन्द्र मुनिवर विराजमान है आपने ससार से बिरक्त जीवो को ज्ञान का रत्न दिया वे तथा आप आचार्य श्री नानेश-सघ के विशिष्ट विचारक है। इन गुणो से युक्त आप श्री धर्मवीर सयमियों के समुदाय में युग-युग तक द्योतित होवे, यही मेरा (मुनि ज्ञानेन्द्र) का मनोरथ है।

समता-विभूति-
आचार्यश्रीनानेशाष्टकम्

छन्द—द्रुतविलम्बित—

सकल-सौख्य-सुधारसपायकं,
विमल-संयम-शील-सुसायकम् ।
सतत--संघ--सुबोधन--दायकं,
प्रसमता-विभवं प्रणमाम्यहम् ।

भावार्थः—सकल सुखकारी अमृत रस का पान कराने वाले, विमल संयम एवं क्षमा रूप प्रशस्त शस्त्र को धारण करने वाले, चतुर्विध संघ को अहर्निश सुबोध देने वाले, अष्टम पट्टधर समता (विस्तारक) विभूति आचार्य श्री नानेश को मैं मस्तक झुकाकर प्रणाम करता हूँ।

अमित-सागर-साम्य समाहितम्,
क्षिति-विहार-विशिष्ट-दिवाकरम् ।
परमघातकरोष—विघातकम्,
प्रसमताविभवं प्रणमाम्यहम् ।

भावार्थ—समता रूप बिना तट के अपार-अगाध समुद्र को समाहित करने वाले, पृथ्वी पर विचरण करने वाले आध्यात्मिक सूर्य तथा आत्मगुण-घातक क्रोध का विघात करने वाले अष्टम पट्टधर.......................

मननपूर्वकशास्त्र-विकासक–
मसुमतां-करुणा-वरुणालयम् ।
सुखद संयम-संस्कृतिपालकम्,
प्रसमता-विभवं प्रणमाम्यहम् ।

भावार्थः—चिन्तन-मननपूर्वक शास्त्र का विकास करने वाले, प्राणियों के प्रति करुणासागर, सुखद संयम संस्कृति पालन करने वाले अष्टम पट्टधर समता ……………………………

जड-सुचेतन-भेदनकारकम्,
निविड-मोह-समूह-विनाशकम् ।
विधि विधान-विवेक विधायकम्,
प्रसमता-विभवं प्रणमाम्यहम् ।

भावार्थः—जड़ चेतन का भेद बताने वाले, सम्पूर्ण मोह रूपी मद का विनाश करने वाले, विवेकपूर्ण संयम के विधानों को बतलाने वाले अष्टम पट्टधर……………………………

शिथिल-संयम जीवन-वारकम्,
कमल-शील-सुगंध-सुवासितम् ।
शशि-समान-विभासित-वक्त्रकम्,
प्रसमता-विभवं प्रणमाम्यहम् ।

भावार्थ-शिथित संयम का विनिवारण करने वाले, शील रूपी कमल की सुगन्ध से सुवासित, चन्द्रमा के समान विभासित मुखमण्डल वाले अष्टम पट्टधर……………………………

अगम-मुक्ति-सुखाब्धिसमीहया,
भव-विभाव-सुतापित-जीवने ।
मद-ममत्व-विलास-विवर्जकम्,
प्रसमता-विभवं प्रणमाम्यहम् ।

भावार्थ:—अगम्य मुक्ति के सुख की इच्छा से प्राणियों के भवरूपी विभाव से तप्त जीवन में मद ममत्व को दूर करने वाले अष्टम पट्टधर..

सकलकर्म-विलास-विनाशने,
शुभद-शास्त्र-विलोडनतत्परम् ।
परमधर्मरतं दमितेन्द्रियम्,
प्रसमता-विभवं प्रणमाम्यहम् ।

भावार्थ:—समस्त कर्मों के नाटक का अन्त करने हेतु सुखकारी शास्त्र के स्वाध्याय में निरत, परम धर्म में रत, इन्द्रियों का दमन करने वाले अष्टम पट्टधर..

अचल-मेरु-समो यम-संयमे,
गहन-सागर-तुल्य-धृतिर्यकः ।
प्रखर-बुद्धियुतस्तमहर्निशम्,
प्रसमता-विभवं प्रणमाम्यहम् ।

भावार्थ.—अचल मेरु पर्वत के समान महाव्रतों में और संयम में दृढ, गहन सागर के समान धैर्य को धारण करने वाले प्रखर प्रतिभा से सम्पन्न अष्टम पट्टधर.........................

प्रशस्तिः छंद अनुष्टुप-

श्रीनानेशाष्टकं स्तोत्रं,
शिष्यज्ञानेन निर्मितम् ।
धारयन्ति गुणान् हृद्यान्,
प्राप्नुवन्ति सुखालयम् ।

भावार्थः—मुनि "ज्ञान" द्वारा रचित आचार्य श्री नानेशाष्टक स्तोत्र का गान कर जो भव्य प्राणी उनके गुणों को यथाशक्य धारण करते है, वे अपूर्व सुख को प्राप्त करते है।

कुछ अनुस्वारादि अशुद्ध प्रिंट हो गये है अतः शुद्धिपत्र दिया जा रहा है।

卐 शुद्धि-पत्र 卐

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
५	१	निलयैः	निचयैः
५	६	ससारात्	संसारात्
५	८	सयम	संयम
६	२	वृत्तिसंक्षेपतपसा	तपसा वृत्ति संक्षेपैः
६	९	विस्तारो	विस्तरो
८	२	रत	रतं
११	१	नृ ंणा	नृणां
१५	२	अन्वर्धनामामहाभागः	अन्वर्थनामसंयुक्तः
१५	१२	शुभ्र	सु
१६	८	ढेशनैः	देशनैः
२८	१	जोधपुरमिति	जोधपुर चं या जोधपूरिति
२४	६	उदयस्तत्रोदितो	उदयोऽभ्युदितो
२४	९	जननी जनको द्धदि	पित्रोः पावनमानसे
३०	१४	संगचि	सर्गश्च
३७	१४	पूरण	पूर्ण
३८	६	ध्ययन	ध्ययनं
३८	३	योग्य	योग्यं
४६	२	मगन	मगनं
४७	९	कृति	कृतिः

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
४८	२	प्राप्तस्	संप्राप्तस्
५५	७	ब्ययने	ध्ययने
५५	१२	मर्मों	सुमर्मो
५६	४	युवाचाय	युवाचार्य
५६	१४	नानेश	नानेशे
५६	१५	दरिको देहो	दरिकं देहं
६३	१३	समतैक्रैक	समतैवैके
६३	१४	स्वरूप	स्वरूपं
६४	१७	पालने	पालनं
६७	२	मनौ	मनो
६८	१५	रत्त	रतम्
६८	१६	परिरदाणे	परिरक्षणे
६८	१७	बहुजने	बहुजनैः
६८	१८	चौथ	चौर्यं
६९	११	सम्बन्धक	सम्बन्धकं
६९	१२	क्षिपन्ते	क्षिपन्त
७१	३	संपादित	सम्पादितं
७१	२०	चके	चक्रे
७२	७	गणिं	गणी
७२	१४	प्रभाव	प्रभावं
७२	१५	सुमार्ग	सुमार्गं
७३	१	ज्ञाम	ज्ञान
७३	८	ध्यान	ध्यानं
७४	३	चराम	चरामः
७४	४	सुख	सुखं

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
७४	८	मुक्ति	मुक्तिं
७४	८	संभा	संभ
७४	१०	दोप्ते:	दीप्ते:
७६	२	चराम	चराम:
७६	३	भक्त्य	भक्त्या:
७६	५	बभूव	वभूव
७७	२	नानेश	नानेशं
७८	२	बोध	बोधं
७८	२	काल्लान:	काल्लीन:
७९	१५	मव	मेव
७९	३	साधो	साधोस्
७९	१३	पतिदिनं	प्रतिदिनं
८०	१	धात्रयी	धात्रेयी
८०	४	गुणे	गुणै
८३	१७	हनिशम	र्हनिशम्

गुरु चमक रहे भानु समाना
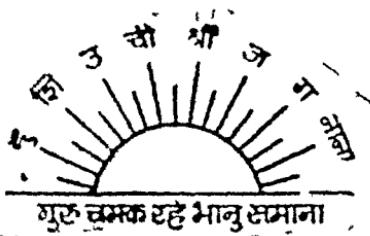
जीवन विकास का साधन

हमारे यहां स्वर्गीय श्री मज्जैनाचार्य पूज्य श्री १००८ श्री जवाहरलालजी म० सा० के प्रेरक प्रवचनों में से संकलित सर्वोपयोगी, सैद्धान्तिक, नैतिक तथा धार्मिक जवाहर साहित्य, स्व० पूज्य श्री १००८ श्री गणेशीलालजी म० सा० के प्रवचनो का साहित्य एवं समता दर्शन के व्याख्याता जैनाचार्य श्री १००८ श्री नानालालजी म० सा० के प्रेरक प्रवचनों में से सङ्कलित सर्वोपयोगी समता दर्शन पर आधारित नानेश साहित्य एवं जैन मुनियों द्वारा रचित साहित्य व धर्मोपकरण सामग्री (ओघा, पूंजनी, पातरा, मालाएं, आसन आदि) हर समय तैयार मिलते हैं।

सर्वोपयोगी जैन-साहित्य प्राप्ति स्थान

श्री जैन जवाहर मित्र मंडल,

महावीर बाजार

ब्यावर-३०५९०१ (राज०)